ॐ

आनन्दामृतवर्षिणी ।

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजक स्वामी
आनन्दगिरिकृत ।

जिसमें

अतिसुगम अतिपवित्र अतिगुप्त सब विद्याधर्मोंमें
श्रेष्ठ प्रत्यक्षफलानुभविक ब्रह्मतत्त्व वर्णितहै ।

जिसे

ब्रह्मनिष्ठोंके उपकारार्थ

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानामें
छापकर प्रकट किया ।

श्रावण संवत् १९५३.

यह पुस्तक: स्वामि रघुनाथानन्द ...
हरिः ॐ॥ हरिः ॐ॥

श्रीः ।

आनन्दामृतवर्षिणीका-

सूचीपत्र ।

वेकादि और अधिकारादि चार अनुवन्ध ॥

१४ २३ जीवब्रह्मकी ऐक्यतामें छःप्रमाण प्रत्यक्षादि भेदउपासना कर्मवालोंकूं समझना कि अहंब्रह्मास्मि इस महावाक्यार्थ कूं वेदों की आज्ञा से मानो वेद की आज्ञा में तकरारनहीं चाहिये ॥

२४ ५ वेदोंका तात्पर्य और परसिद्धान्त अध्यायकी समाप्तिपर्य्यन्त २५ के पृष्ठमें प्रथम अध्याय समाप्त हुआ ॥

द्वितीय अध्यायका संक्षेप ॥

२५ १२ मुक्तिके होनेमें कारण ॥

२६ ५ ब्रह्मका दोप्रकार का लक्षण तटस्थ स्वरूप ॥

२६ १३ तत्पदका दोप्रकार का अर्थ वाच्य लक्ष्य ॥

२६ १६ माया जड़ चैतन्य अज्ञान अविद्या प्रकृति ईश्वर जीव शुद्ध ब्रह्म सबल ब्रह्म इन शब्दों का निरूपण ॥

३० १ जिस प्रकार ईश्वर जगत्का कर्ता ॥

३३ ३ सूक्ष्म प्रपंच का निरूपण अर्थात् जैसे सूक्ष्म आकाशादि श्रोत्रादि ज्ञानेन्द्रिय वाक् आदि कर्मीन्द्रिय मन आदि प्राणादि की उत्पत्ति पंच कोश आदि

कनिष्ठ भेद करके जीवन्मुक्तका लक्षण विदेह मुक्तिका ल-क्षण ज्ञान उपरति वैराग्य का हेतु आदि चार चार भेद करके फलके सहित लक्षण ज्ञानी ब्रह्मवित् का ब्रह्मविदादि भेद करके चार प्रकारका लक्षण है प्रथममुक्तिआदिका लक्षण लिखकर फिर ज्ञानकी सात भूमिका लिखकर फिर श्रुति स्मृति आदि प्रमाण पूर्वक और अनेक दृष्टान्त युक्ति शंका समाधान पूर्वक इस बात कूं सिद्ध किया है जो कनिष्ठ जीवन्मुक्त किसी हेतु से संपादन न होसके तो विदेह मु-क्ति में सन्देह नहीं ॥

चौथेअध्याय का ७१ के पृष्ठमें प्रारम्भ हुआ ८२ के पृष्ठमेंसमाप्त हुआ उसमें अन्तरंग बहिरंग भेद करके ब-हुत ज्ञानके साधन लिखे हैं ॥

पांचवें अध्यायका ८३ के पृष्ठमें प्रारम्भ हुआ ९१ के पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें सतोगुण रजोगुण तमोगुण का लक्षण और यज्ञ तप सुखदान कर्मादिका सत्वादि भेदकर-के तीन तीनप्रकार का भेद फलके सहित लिखाहै ॥

छठे अध्यायका ९१ के पृष्ठमें प्रारम्भ हुआ १०२ के पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें श्रुति स्मृति युक्ति दृष्टादि प्र-माण पूर्वक इसबातकूं सिद्ध किया है कि मुक्तिका सा-धन मुख्यज्ञान है कर्मादि परम्परा करके गौणहैं और

जीव ब्रह्मकी एकता पूर्णतादि में बहुत वादी की शं-
काहै सबका श्रुति स्मृति आदि प्रमाणपूर्वक समाधान
किया है ॥

सातवें अध्याय का १०२ के पृष्ठमें प्रारम्भहुआ ११४
के पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें जीवात्मा परमात्मा का लक्षण
और जीव ब्रह्मकी ऐक्यता और ऐक्यता पूर्णता नित्य मु-
क्तादि सिद्धिमें बहुत दृष्टान्त है और जो जो वादीने शं-
काकरी सबका श्रुति स्मृति आदि प्रमाणपूर्वक समा-
धान किया ॥

आठवें अध्याय का ११४ के पृष्ठमें प्रारंभ हुआ १२२
के पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें अहं ब्रह्मास्मि इस अभ्यास
करनेके साधन लिखे हैं और मुख्य तात्पर्य वेद शास्त्रों
का किस मतमें है और क्या है और श्रुतियों का अविरो-
ध और यो सब जो हम कहते हैं इसका भलेप्रकार शारी-
रक भाष्यमें निश्चय होसक्ताहै यो प्रसंग है और कर्म उ-
पासनादि में जो मुख्य मुक्तिके साधन हैं उनका निश्चय
और वेदान्त शास्त्रके मतसे मुक्ति संसार परमेश्वर जी-
वका जो लक्षण उसकूं दृष्टान्त इतिहास युक्ति श्रुति स्मृ-
ति आदि प्रमाण पूर्वक सिद्ध किया है और संसार मुक्ति
परमेश्वर जीवका नैयायक सांख्य पूर्वक मीमांसा शास्त्र
वाले औरभी बौद्धादि जैसा जैसा कहते हैं उनका मत भी
किंचित् संक्षेप करके लिखा है ॥

नवें अध्यायका १३४ के पृष्ठमें प्रारम्भ हुआ १४
क पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें अज्ञान का लक्षण और अ
ज्ञान का कारण जो आसुरी सम्पत् के अवगुण उनका
र्णन और काम क्रोधादि कूं ज्ञानकी सिद्धिके लिये औ
पीछे ज्ञानके जीवन्मुक्ति की सिद्धिके लिये त्याग
चाहिये इस बातमें गुरु शिष्यका सम्वादहै ॥

दशवें अध्यायका १४१ के पृष्ठमें प्रारम्भ हुआ १८
के पृष्ठमें समाप्त हुआ उसमें जीवन्मुक्तिके पांच प्रयोज
और अन्तष्करणके निरोध का प्रकार और जीवन्मुक्ति
के साधन लिखेहैं फिर श्रीकृष्णचन्द्रजी महाराजजीके
कृपासे आनन्दामृतवर्षिणी समाप्तहै ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

आनन्दाऽमृतवर्षिणी ।

मूल ॥

श्रीसच्चिदानन्दस्वरूप जो इन्दिरेश्वर ।

टी०—श्री लक्ष्मी और शोभा और माया कूं कहते हैं तीनों करके अर्थ लगताहै सच्चिदानन्द लक्ष्मीपति शोभावान् मायाके स्वामी माया करके युक्त परंतु विशेष योंहै सच्चिदानन्द माया के स्वामी सच्चिदानन्द में तीन पद हैं सत चित् आनन्द अब यों देखना चाहिये कि तीनपद क्यों कहे किसका यों कारणहै जो केवल सत् कहते तो न्याय शास्त्र-वाले आकाशकूंभी सत्कहतेहैं सो वह जड़ है इसलिये चित्भी कहा वह दुःखरूप वा आनन्द रूप है इसलिये आनन्द भी कहा और सत्ता दो प्रकार की है व्यावहारिकी पारमार्थिकी व्यावहारिक सत्ता वहहै जो देहादिमें है औरपारमार्थिकी सत्ता जो सच्चिदानन्द ब्रह्ममें है इस जगह पारमार्थिकी सत्तासे प्रयोजनहै इसीप्रकार चैतन्यता आनन्दता भी व्यावहारिकी, पारमार्थिकी भेदसे दो प्रकार-की है ॥

मू०—इन्दीवर इन्द्र मणी की सदृश जो सुन्दर रमा करके लालितहै पादपंकज जिन्हों के ऐसे जो ॥

टी०—इन्दीवर इन्द्रमणी दो विशेषण देनेका यह प्रयोजन है भक्तोंके लिये तो इन्दीवरकी सदृश कोमल और दुष्टोंके लिये इन्द्रमणीकी सदृश कठिन है ॥

मू०—रामेश्वर और वन्दीकियेहैं इन्द्रके रिपोंके वृ जिन्होंने ऐसे जो सुरेश्वर और आनन्द है वीर्य्य जिन का ऐसे जो परमेश्वर और मन्द मुसुकान करके आन कियेहैं लोकोंकेवृन्द जिन्होंने ऐसे जो नन्दजीके नन और आत्मरूप करके चितवन करतेहैं जिन्होंकूं सनत् मार, सनातन, सनक, सनन्दन और चंद्रवंश में भक्तों लिये अवतारहै जिन्होंका ऐसे जो श्रीकृष्णचन्द्र वसुदे जीके नन्दन उन्होंको मैं वन्दन करताहूं हे अमरवर आ पके गुणोंके अन्तका नहीं जाननेवाला॥

टी०—परमेश्वरके गुण दो प्रकारके हैं प्रथम में दो भे हैं ऐसे जैसे अज अव्यक्त अद्वैत अमरादि जो निषेध क के कहेजाते हैं दूसरे सत् चित् आनन्दादि जो प्रतिपाद करके कहेजाते हैं और दूसरेराम कृष्णादि सगुण ब्रह्म गुण श्याम शान्ताकार करुणाकर भक्तवत्सलादि॥

मू०—जो नर उसकी स्तुति जो आपके सदृश न हो तो क्या आश्चर्य है क्योंकि ब्रह्मादिकी भी स्तुति आपके सदृश नहीं है और जो यों कहो यथामति स्तुति कर वाले सब निर्दोष हैं तो हेदीनार्त्तिहर। मेरा जो इस आन न्दामृतवर्षिणीके लिखने में जो परिकर सोभी निर्दोष हे भगवन् आपकी महिमा मन वाणीका तो विषय न है और वेदभी अतद्व्यावृत्ति करके चकित हुये आप की महिमा कूं कहते हैं सो॥

टी०—अतद्व्यावृत्तिका अर्थ यों है कहेकूं आवृत्तिविशेष कहे कूं व्यावृत्ति औ अततके वारम्वार कहेकूं अतद्व्यावृत्ति कहतेहैं अततका अर्थ योंहै नहीं है ततसो नहींहै तत ब्रह्मकूं कहते हैं तात्पर्य्य यों है श्रुतिने कहकह कर जो निषेध कियाहै सो नहीं है इसीकूं अतद्व्यावृत्ति कहते हैं शास्त्र की रीतिसे अतत का अतद्बोला जाताहै॥

मू०—महिमा किसके स्तुति करने योग्य है और आपके कितने गुणहैं यों कौन कहसकै फिर आप किसका विषय हो सक्त हैं परन्तु अर्वाचीन पदके अर्थात् अवर पदकें॥

टी०—जिस करके जाना जावे उसको पद कहते हैं ब्रह्मके दो पद हैं एक अवर अर्थात् उरला लगुणा दूसरा पर अर्थात् परला निर्गुण॥

मू०—विषयमें किसका मन नहीं लगताहै और किसकी वाणी यों नहीं चाहतीहै कि परमेश्वर का कीर्तन करना चाहिये परन्तु विना आत्महत्यारे के संसारमें तीन प्रकारके पुरुषहैं युक्त १ मुक्तिकी इच्छा वाले २ विषयी ३ मुक्त तो शुक सनकादि ज्ञानी जन सदा आपके गुणोंका कीर्तन करते रहते हैं मुक्तजन ब्रह्मानन्दकूं अनुभव करते हुये स्मरण करते हैं कि यों ब्रह्मानन्द परमेश्वर की कृपाहै और मुक्तिकी इच्छावालोंकूं संसार रूप रोगकी योंहीं परमेश्वर का कीर्तन करना परमऔषधि है २ और विषयी जनोंकूं आपके चरित्र विहारादि परमप्रिय लगतेहैं

हे भक्तप्रिय बृहस्पति आदिकी जो स्तुति क्या आप आश्चर्य्यहै तात्पर्य्य कुछ आश्चर्य नहीं है क्यों समस्त परम अमृतरूप मधुर कोमल २ वाणी सब आपही की कहानीहैं और जो यों कही फिर तुम्हारी वाणी क आश्चर्य होगी हेपरमेश्वर मेरी बुद्धिमें तो यों अर्थ निश्च कियाहै अपनी वाणीकूं आपके गुणोंका कथन करके पवित्र करताहूं प्रार्थना यों है हे कृष्णचन्द्र मेरी यों बालक कीसी हठ जानकर आपने सर्वप्रकार क्षमाकरनी ग्रन्थके आदि मध्य अन्तमें निर्विघ्न समाप्तिके लिये और आस्ति कमार्ग प्रवृत्तिके लिये शिष्टाचारानुमित्त और श्रुति बोधित जो तीन प्रकारका मंगल नमस्कार आशीर्वाद वस्तुनिर्देश होताहै सो यहांतक मंगलाचरण है ॥

विद्वान्‌जनोंसे प्रार्थना यों है जो यो मेरी भाषामें लि- खाहै जो श्रुति स्मृति वेदान्त शास्त्रसे विरुद्ध हो तो अंगीकार नहीं करना और जो किसीजगह प्रकरणसंगति पुनरुक्ति आदि दोष प्रतीत होतेहों तो बनादेने और जो यों भाषा अच्छी न होवे और तात्पर्य्य वक्ताका भलेप्रकार न प्रतीत होता हो तो जैसी विद्वान् पसन्द करें वैसीही लिखदेनी और परमेश्वरके स्वरूपका जो इसके विचार में चिंतवन करनेमें आता है इस गुण करके अंगीकार करना योग्यहै कुछ वाणीकी चतुराई तो इस में है नहीं और जो कहीं बुद्धिके भ्रमसे अन्यथा लिखागया हो

उसको वना देना तात्पर्य सवप्रकार आपनेभी क्षमा करनी योग्यहै मेरे अभिप्रायकूं विचारना चाहिये वक्ताका इसके लिखने में क्या अभिप्राय है सो सुनो मैंही लिखे-देताहूं श्रीकृष्णचन्द्रने गीताशास्त्र में कहाहै इस गीता शास्त्रकूं जो मेरे भक्तोंकूं धारण करावेगा तो मेरे विषय परमभक्ति करके मुझकूं प्राप्त होवेगा और स्वामी विद्या-रण्यभारतीतीर्थजीने पञ्चदशी में कहा है किसी उपाय करके ब्रह्मका सदा चिन्तवन करना जो एकान्तमें वैठ-ना तो ब्रह्मही का चिन्तवन करना और जो दूसरेसे पर-स्पर वात करनी तो ब्रह्महीकी करनी और जो किसीकू कथन करना तो ब्रह्महीका करना यों जो एकपर होनाहै इसीकूं विद्वान् ब्रह्माऽभ्यास कहतेहैं सो मुझकूं यो उपाय ब्रह्मके चिन्तवन करने का अच्छा प्रतीत होताहै ॥

मू०–पञ्चदशी वेदान्तसार तत्वानुसन्धान श्रीभग-वद्गीता टीका सहित और आत्म वोधादि पोथी समीप रखकर जितनी मेरी बुद्धि थी उन्होंकूं विचार जो सीधा खुलासा अर्थ वालकों की समझमें आवे ओ अर्थ आन-न्दामृतवर्षिणीमें लिखाहै बुद्धिमान से इस आनन्दामृतव-र्षिणी कूं एक वेर श्रद्धा भक्ति करके और चित्तकूं एकाग्र करके कुतर्कके विंना सद्गुरुसे जैसे गुरु वेदगीतामें लिखे हैं तात्पर्य वेदशास्त्रके तात्पर्य्यकूं जानने वाले और ब्रह्मनिष्ठ उन्होंसे सुनना योग्य है जो केवल वेद शास्त्रार्थ

कें जानने वाले हैं और ब्रह्मनिष्ठ नहीं वे विज्ञान अनुभव न
कहसकेंगे और जो केवल ब्रह्मनिष्ठ हैं वे युक्ति दृष्टांत शं
समाधान पूर्वक नहीं कहसकेंगे इसलिये वेद शास्त्रार्थ
जाननेवाले और ब्रह्मनिष्ठ गुरोंसे सुनना योग्य है जो इ
में अनुष्ठान कहाहै उसकूं सुन्नेवालेकी इच्छा हो करो
मतकरो तात्पर्य्य यह है जो सुनेगा तो अपने आनन्द
लिये आपही अनुष्ठान करेगा दृष्टांत कहतेहैं एक राजा
कभी पण्डितों कूं कुछ न देताथा न कभी कथा सुनताथ
किसी विद्वान्‌ने सब पण्डितोंसे कहा कि तुम राजासे क
हो हे राजन् आप हमारी कथा सुनो धनदो वा न दो पण्डि
तों ने कहा महाराज वृथा अनधिकारी से कौन माथा मारे
प्रयोजनके विना तो मन्दभी नहीं प्रवर्त्त होताहै विद्वान्‌ने
उन्होंकूं दृष्टान्त दिया जो केलीगेहकी देहलीमें तरुण स्त्री
दूध पीहुई किसी प्रकार प्राप्त होजावो फिर मैथुनकी इच्छा
करो वा मतकरो अब दृष्टान्त और दार्ष्टान्त विचारो क्या
वोराजा पापाड है जो पण्डितोंकी कथा सुनकर मुक्ति
के लिये धर्म दानादि नहीं करेगा और क्या वो स्त्री पत्थर
है कि उसकूं ऐसी जगे अपने आनन्दके लिये कामका
आविर्भाव नहीं होगा ऐसेही क्या इस ग्रंथका सुननेवाला
पापाण है जो निरतिशय आनन्दके लिये अनुष्टान न करेगा

टी०—जिसके सिवाय और किसीजगह ब्रह्मलोकादि
में आनन्द नहीं ॥

मू०—जो अर्थ इस आनन्दामृतवर्षिणी में लिखना है उस की संगतिके लिये जहां यों लिखेंगे प्रथम ज्ञानके चार साधन हैं यहां तक उपोद्धात कथाहै सो सुनो ॥

टी०—वाञ्छित अर्थकूं मनमें रखकर प्रथम और प्रसंग कहना ॥

मू०—जो एक चैतन्य महानंद शुद्धब्रह्म नित्यमुक्त सो मायोपहित हुआ ईश्वर १ और वोही चैतन्य समष्टि सूक्ष्म उपाधि करके उपहित हिरण्यगर्भ २ और वोही चैतन्य समष्टि स्थूल उपाधि करके उपहित विराट् ३ इन तीन भावोंकूं प्राप्त होता भया और ओही चैतन्य अविद्योपहितहुआ प्राज्ञ १ और व्यष्टि सूक्ष्म उपाधि करके उपहित तैजस २ और व्यष्टि स्थूल उपाधि करके उपहित विश्व ३ इन तीन भावोंकूं नाना प्रकार का जीव होता भया फिर ईश्वरजीवोंके धर्म अर्थ काम मोक्ष के लिये सृष्टि स्थिति संहार कूं करते भये धर्मादि में मोक्ष मुख्यहै और तीनि धर्मादि गौणहैं और धर्मादि तीनके दो दो फलहैं मुख्य फल परम्परा करके तीनोंका मोक्षहै और स्वर्गादि गौणहैं धर्मकामुख्य फल मोक्षहै और स्वर्गादि गौणहैं स्वर्गादि फल जो वेदोंमें कहे हैं वे ऐसेहैं जैसे वालककी शोभाके लिये कानछेदन कराना और मोदकादि को फल कथन करदेना अभिप्राय तो उन्होंका जो है सोहै श्रुतिमाताके सदृश हित ॥

टी०—परिणाम अन्तमें सुखहो जिसके॥

मू०—चाहनी वालीहै जैसे किसीका पुत्र रस्ते की मृत्तिका खायाकरताथा उसकी माताने उसकूं बहुत बरजा उसने न माना हारकर माताने कहा हे पुत्र यों गंगाजीकी मृत्तिका खायाकर बहुत सुन्दरहै विचारो माताका अभिप्राय गंगाजीके मृत्तिकाके खिलाने में नहीं है रस्तेकी मृत्तिका के वर्जने में उसका अभिप्राय है ऐसेही योमूर्ख जीव रस्तेकी मृत्तिका की नाईं शब्दादि विषयोंकूं इष्ट जानताहै श्रुतिने यों समझा इन विषयोंसेतो स्वर्गादिअच्छे हैं तात्पर्य्यतो श्रुतिका मुक्तिमें है इसीहेतुसे मोक्ष मुख्यहै और उपासना इसलिये है किसीका पुत्र जगह जगह वृथा फिरता था समेसिर नहीं हाथ आताथा उसके पिताने विचार कर पुत्रसे कहा कि तू इस मकानपर वैठारहाकर कुछ उसकूं लालचदेदिया तात्पर्य्य जब काम पड़ैगा यहांसेबुलालूंगा वैसेही यो मन काहीं यज्ञ दानादिके फल स्वर्गादि में कहीं शब्दादि विषयों में मृग तृष्णावत् भूला भागाभागा फिरताथा कभीश्रम नहींहोता था जो आत्मस्वरूपका विचार करे. इसीलये श्रुतिमें एकाग्र चित्तके लिये उपासना कही है विचारदेखो एकाग्रचित्तके विना श्रवण मनन निदध्यासन ये जो मुख्य साधन मुक्तिके हैं सो नहीं होसक्तेहैं १ इसीप्रकार अर्थजो अशरफी रुपयादि करके जगत्में प्रसिद्धहोना और जगत्के सुख सम्पादन करने गौणहैं और रुपयादि खर्चकरके धर्म करना

कथा श्रवण करना सन्तोंका संग करना तीर्थों का सेवन करना मुख्यफल उन्हों का भी परम्पराकरके मोक्षहै २ ऐसेही काम अपने सुखके लिये खाना पीना और आनन्द के लिये स्त्रीका संग और स्थान वस्त्रादिमें जो सुख बुद्धि सो गौण और भोजनादि वास्ते धर्मके और श्रवणादि के लिये शरीरकी रक्षाकरनी और स्त्रीकासंग वास्तेपुत्रकी उत्पत्तिके वोभी किसी अंशमें मुक्तिका हेतुहै इसका भी परम्परा करके मुख्य फल मोक्ष है ३ तात्पर्य्य संसारमें पुरुषार्थ मुख्य मोक्षहै वे जो अविद्योपहित जीव उन्होंमें से श्रुति स्मृति जो परमेश्वर की आज्ञा है उन्होंकूं जो करते भये उन्होंकी उपासनाके लिये जैसी उन्होंकूं मूर्त्ति परमेश्वरकी वांछित हुई वेही मायोपहित ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य्य, शक्ति, गणेशादि मूर्त्ति कूं धारण करते भये सो मूर्त्ति कैलास वैकुण्ठादिमें और भक्तोंके हृदयमें सदा वासकरती रहती हैं वे जो विष्णु भगवान् हैं सो भक्तों के उद्धारके लिये जो ऐसे भक्तहैं कि सदा जो परमेश्वरकी आज्ञा उसकूं करके शुद्ध किया है अन्तःकरण जिन्होंने और शम दमादि साधनों करके युक्त मोक्षकी इच्छावाले परन्तु वहुत गंभीर जो ऋग्, यजु, साम, अथर्वण वेद उनके विचारने में असमर्थ और विना विचार के ज्ञान नहींहोता है जैसे पदार्थका भानुविना प्रकाशके इसलिये उनकूं ब्रह्मतत्त्व विचारनेके लिये श्रीकृष्णचन्द्र

अवतार लेकर चारों वेदों का अर्थ जो कि मुख्य मोक्ष[illegible]
साधन है अर्जुनके निमित्त करके गीताशास्त्र रचते भ[illegible]
और वेही विष्णु व्यासदेव अवतार लेकर भागवता[illegible]
पुराण भारतादि इतिहास रचते भये जिन्होंमें कर्म उ[illegible]
सना ज्ञान तीनों हैं प्रसंगसे गीताकूंभी महाभारतकें बी[illegible]
में लिखा और जो वेदान्त वेदोंका सिद्धान्त जिसकूं वे[illegible]
का मस्तक कहते हैं उस सिद्धान्तकूं फिर सूत्रोंमें कथ[illegible]
करते भये तात्पर्य्य कई कई श्रुतियोंका अर्थ एक एक[illegible]
त्रमें संक्षेप करके कहा वे जो सूत्र और गीता शास्त्र[illegible]
नका जो अर्थ सोभी बहुत गम्भीर और परमेश्वरका[illegible]
भिप्राय परमेश्वर जाने या जिसपर उनकी कृपाहो वो ज[illegible]
ने पीछे उनके कलियुगके जीवनने हठ करके पण्डि[illegible]
ताईके बलसे अपने अपने मतमें व्याससूत्र और गीता[illegible]
जीका अर्थ बनालिया जो अभिप्राय श्रीकृष्णचन्द्र औ[illegible]
व्यासदेव जीकाथा वह सिद्ध न हुआ ज्ञानकाण्ड जो स[illegible]
क्षात् मुक्तिका हेतुथा लोप होगया तब सब देवता विष्[illegible]
ब्रह्मादि जुरकर श्रीमहादेवजीके पास गये सारी व्यवस्[illegible]
कही महादेव जीने कहा हम वेदमार्ग की प्रवृत्तिके लि[illegible]
अवतार लेंगे आपभी सब ब्रह्मा इन्द्रादि अवतारलो[illegible]
महादेवजी महाराज तो श्रीशंकराचार्य्य नाम करके औ[illegible]
विष्णुजी सनन्दन नाम करके और ब्रह्माजी मण्डनमि[illegible]
नाम करके सरस्वतीजीके सहित और इन्द्र सुधन्वा[illegible]

॥ नाम करके तात्पर्य इसी प्रकार बहुत देवता अवतार
तेभये क्योंकि जब ज्ञानकाण्ड का लोप होताहै तब
हादेवजी अवतार लिया करते हैं और सब मतवालों
शास्त्रार्थ करके सबझूठे मतोंका खण्डन करके जो सार
सिद्धान्तवेद भगवान्‌का है उसकूं स्थापन किया करते हैं
जाका अवतार इसलिये हुआ जो शास्त्रार्थमें झूंठी कु-
र्कके और हठ करेगा और शास्त्रार्थ होकर उसका मत
ण्डन होजावे फिर दुराग्रहसे न माने अथवा बहुत जुर-
र सामना करें तो राजा उनकूं दंडदेंगे पीछे अवतार कूं
३। ६ वर्षकी अवस्थामें श्रीशंकराचार्य्य जीने संन्यास
जकर १६वर्षकी अवस्थामें १६ भाष्यरचे १० उपनिषदूपर
१ भाष्य व्यास सूत्रोंपर एक शारीरिक भाष्य
गीताष्णुसहस्रनामभाष्य गीता सनत सुजात भाष्य नृसिंह-
औपिनी भाष्य तात्पर्य उपनिषद् गीतादिका अर्थ भले-
सकार श्रुति स्मृति युक्तिदृष्टान्त प्रमाण देदेकर सिद्धकिया
विषौर जो गीता भाष्यादिके विचारनेमें असमर्थ देखे उन-
वस्कालिये आत्मबोधादि छोटे छोटे प्रकरणोंमें वोही अर्थ
लिक्षेपकर लिखतेभये फिर सब वादियोंकूं शस्त्रार्थमें जय-
फेरके दिग्विजय करतेभये जो वेदोंका सार सिद्धान्तथा
औसकूं प्रकट प्रचार करतेभये ऐसा ऐसा शास्त्रार्थ हुआ
नमिशालीस दिनतक मण्डन मिश्रसे चरचा रही मण्डन
मिश्रकी स्त्री सरस्वतीजीका अवतार साक्षी थी उसने

पुष्पों की माल दोनोंके गलेमें डाल दीथी क
था जिसकी माला सूखेगी वोही हारेगा चालीस
पीछे मण्डनमिश्रकी माला सूखगई इसीप्रकार वहुत
शास्त्रार्थ हुआ और चारों दिशा में महाराज गये उनके
तक ज्यो यशीआदि मठ चारोंदिशा में विद्यमान हैं
कपाली आदिने जो सामना किया वे कुछ महा
मंत्रों से मारे कुछ राजाने मारे विस्तार इस कथा का
दिग्विजय ग्रन्थ हैं उनमें वहुत है तात्पर्य्य यों है जो
वुद्धिमान हैं उनके लिये तो शारीरक भाष्यादि व
ग्रन्थ रचे और जो मन्दवुद्धि हैं उनके लिये आत्म वो
छोटे छोटे प्रकरण रचकर ३२ वर्षकी अवस्थामें म
राज तो कैलास कूं जाते भये फिर जो पद्म पदादि म
जके मुख्य शिष्यथे उन्होंनेभी वहुतग्रन्थ रचे स्वामी आ
न्द गिरिजीने तो सव भाष्यादि ग्रन्थोंपर टीका करी
सुरेश्वराचार्य्य महाराजने वार्तिक वनाया पीछे उन
स्वामी शंकरानन्दभगवान और विद्यारण्यादि जीने आ
पुराण और पंचदशी वेदान्तसारादि वहुत सहस्रा
ग्रन्थ रचे वे ग्रंथ अवतक तो परमेश्वरकी कृपासे सूर्य
इस लोकमें प्रकाश रहेहैं ॥

अव इससमयमें ऐसे जो परमेश्वर के भक्त कि जिन
गुरू परमेश्वर में श्रद्धा भक्ति और उनकी यथाश
आज्ञा करनी परन्तु आत्मवोधादि प्रकरणोंके विचा

भी असमर्थ उनकूं सुखपूर्वक ब्रह्मतत्त्व विचारने के लिये
र मुख्य मुंशी वंशीधर जी कायस्थ भटनागर रहने-
ले श्री गंगा यमुनाजी के मध्यमें इंद्रप्रस्थसे २२ कोश
ं दिशामें श्री कन्दरापुरीप्रसिद्ध सिकन्दराबादके लिये
सेहैं वे मुन्शीसाहब कि जिन्हों रूप लक्षी विद्यातेजहुक्म
र साम दाम क्षमा औदार्यादि बहुत गुणकरके युक्त
तिव्रता स्त्री फिर यो आश्चर्य कि ऐसे समयमें सत्संगी
मेश्वरमें भक्ति गंभरिादि गुण करके युक्त तात्पर्य्य ऐसे
जन बुद्धिमान् इस समय में होने कठिनहैं जिनकूं व्यव-
रमें राज और परमार्थ में विद्वान सराहना करतेहैं उन्हों
श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रार्थनासे उन्होंके उपवन अन्तर्गत
कान कोठीमें ठहरकर और श्रीस्वामी आत्मागिरिजी
हाराज रहनेवाले प्रथम गुजरातके जिनकूं वेदान्त शास्त्र-
अर्थकरामलकवत्है उनकी सहायसे श्रीमत्परमहंसपरि-
ज स्वामी मलूकगिरिजी महाराजका अनुचर शिष्य
ामीजीके चरण कमलोंका पूजनेवाला मैं आनंदगिरि
आनंदाऽमृतवर्षिणीका बनानेवालास्वामीजी और
ाकृष्णचन्द्र महाराजकी कृपासेआत्मबोधादि छोटे छोटे
कारणोंमें जो मैंने अर्थ सुनाहै उसमेंसे भी स्वल्प यथा
ाति और श्रीमद्गीताकाभी अर्थ किसी किसी जगह इस-
ानंदामृतवर्षिणी में लिखूंगा ॥
प्रथम ज्ञान के मुख्य चार साधन हैं उनकूं लिखतेहैं ॥

विवेक १ वैराग्य २ शमादि षट्क सम्पत्तिः ३ मुमुक्षुत्व अर्थ इनका योंहै ॥

इस संसारमें नित्य अनित्य क्याहै और करते करते यो निश्चय करना कि आत्मा और आत्मासे पृथक् सब अनित्यहै १ देखे सुने जो पदार्थ स्त्री चन्दनमालादि लोक के जो सुने अमृत नन्दनवन देवांगनादि सब नित्य दुःखदायी जानकर मनकी इच्छापूर्वक सबकूं देना फिर उनमें दीनता न होनी ब्रह्मलोककूं तृ जानना २ तीसरेमें ६ भेद हैं शम १ दम २ उपर तितिक्षा ४ श्रद्धा ५ समाधान ६ इनका अर्थ याहै आदि अन्तःकरणकी संकल्पादि वृत्तियोंकूं रो वेदान्तशास्त्रके श्रवण मनन निदिध्यासनके विन श्रोत्रादि इन्द्रियों कूं शब्दादि विषयों से रोकना देह त्रा और श्रवणादिके विना २ यम नियमादि साध अन्तःकरण कूं निरोध करके ॥

टी०—अहिंसा १ चोरी न करनी २ सत्य बोलना ३ ब्र चर्य्य ४ अपरिग्रह अर्थात् शरीर यात्रासे सिवाय संग्रह करना ५ इन पांचका नाम यमहै ॥

और शौच १ संतोष २ तप ३ स्वाध्याय अर्थात् प्र काजप ४ ईश्वर प्रणिधान अर्थात् परमेश्वरमें भक्ति ५ पांचका नाम नियम है ॥

मू०—सब लौकिक वैदिक कर्मों से उपराम होना अ

त्व विचारने के लिये देहयात्रामात्र क्रिया करनी और ग्रत्अवस्था सुषुप्तिवत् रहनी इसी का नाम उपरती है श्रवणादि में जो जो दुःख सुख पड़े सबकूं सहजाना ४ वेदान्त शास्त्र और गुरु ज्ञानके देनेवाले कहतेहैं उन्हों विश्वास करनां कि इसी प्रकारहै ५ श्रवणादि के समय ले प्रकार चित्तकूं समाधान करना ६ तीसरे साधन के द होचुके चौथे साधनका यों अर्थ है मुक्तिको मुख्य पुरुर्थ समझकर मुक्ति की नित्य इच्छा रखनी ॥

मुक्ति के ये चार साधन मुख्यहैं और सब साधनोंका हींमें अन्तरभावहै जोइनका भलेप्रकार अनुष्ठान करे तो र किसी साधनकी अपेक्षा नहींहै सब साधनोंका यों वहैं ॥

ग्रंथमें जो चार अनुबन्ध होतेहैं उनकूं लिखतेहैं ॥

अधिकारी १ विषय २ सम्बन्ध ३ प्रयोजन ४ इनहीं-र साधनों करके जो सम्पन्नहो सो इस ग्रंथके पढ़ने सुनने-का अधिकारी १ जीवन ब्रह्मकी एकता इसमें विषयहै २ ग्रंथबोधक और ग्रंथबोध्य इन दोनोंका बोध बोध्यक व इसमें सम्बंधहै ३ सब शोक दुःखों की निवृत्तिऔर मानन्दकी प्राप्ति जिसकूं मोक्ष कहतेहैं यों इसका प्रयो-नहै ४ इसमें दृष्टांत योंहै जैसे रसोईमें अन्नका भूखा तो अधिकारी १ और जो अन्नमें मधुरादि स्वादहैं सो विषय२

और अन्न वरतनादि का संयोग सम्बन्ध ३ भूखक
हो जाना प्रयोजन ४ जो कोई कहै तुमब्रह्म २ क
दिखाओ आपका ब्रह्म कहां और कैसाहै जैसे ना
केवल प्रत्यक्षप्रमाणमानताहै जो वात मूर्खता कीहै
सुनो जैसे किसी वस्तुके सद्भावमें एक प्रत्यक्ष प्र
ऐसे और भी अनुमानादि प्रमाणहैं प्रथमतो प्रत्यक्ष प्र
दो प्रकारकाहै वाहर १ भीतर २ वाहर ज्ञानेन्द्रियों क
शब्दादि विषयों का और पंचभूतोंका ज्ञान होताहै
नेत्रकरके तो रूपका और पृथ्वी जल तेजकाही ज्ञान
है और रूपके विना शब्दादि चार विषयोंका और
आकाश का नेत्रसे ज्ञान नहीं होता है १ और
दुःख सुख भूख शोकादि का ज्ञान अन्तःकरण करके
ता है और सुषुप्ति में जो अज्ञान उसका ज्ञान साक्षी
तन्य करके होताहै उस पूर्व पक्षी से बूझना चाहिये
दुःख सुखादि जिसकूं होतेहैं क्या वो नेत्रसे दिखास
और जो कहेकि दुःखादि कूं नेत्रसे कौन दिखा सके
हम कहते हैं ब्रह्मकूं नेत्रसे कौन दिखासके और श्रीकृ
चन्द्रादि जो मूर्ति हैं वे मायामय मूर्ति हैं क्योंकि
वेद शास्त्रों का सिद्धांत है कि जोदृश्यहै सो अनि
(गोगोचर जहँ लगि मन जाई । सो सब म
जानो भाई) जो उन मूर्तियों कूं कोई परमा
सची कहे तो वे मूर्ति अनित्त्य हैं परमेश्वर कूं वेद श

नित्य कहतेहैं तात्पर्य्यं परमेश्वर वास्तव अमूर्त है जैसे
ःखादि अन्तःकरण करके जानेजातेहैं सूक्ष्मदर्शीपुरुषों-
के सूक्ष्मबुद्धि करके अन्तर्मुख वृत्ति करके और प्रत्य-
ादि प्रमाण करके प्रमेय चैतन्यका अपरोक्ष होसक्ता है
दान्त शास्त्रमें ६ प्रमाणहैं प्रत्यक्ष १ अनुमान २ उपमान
३ शाब्द ४ अर्थापत्ति ५ अनुपलब्धि ६ इनका अर्थ भाषा-
भले प्रकार लिखनेसे बहुत विस्तार होता है इसलिये
ामात्र रस्ता दिखाते हैं प्रत्यक्ष का अर्थ तो पीछे लिखा-
या अनुमान से इस प्रकार ॥

टी०--अनुमान के पांच अंगहैं पक्ष १ साध्य २ हेतु ३ व्याप्ति ४ दृष्टांत ५ इसलिये पांच बायवी अनुमान कहा जाता है जैसे पक्ष १ कियोपर्वत-साध्य २ अग्निवालाहेतु ३ धूमहोनेसे--व्याप्ति ४ जहां जहां धूम होताहै वहां निश्चय अग्निहोती है--दृष्टांत ५ जैसे रसोई के मकान में ॥

सू०--ज्ञान होता है कोई मनुष्य जंगल में चला जाता
अग्निकी इच्छा हुई देखा पर्वत में धूम उठ रहा है वो
नुमान करताहै वो पर्वत अग्निवालाहै धूम होनेसे जहां
ां धूम होताहै वहां वहां निश्चय अग्नि होताहै जैसे
ई के मकानमें विचार देखो अग्नि प्रत्यक्ष नहींहै पर-
पर्वतमें अग्निका होना प्रमाणहै २ उपमा करके इस-
ार ज्ञान होताहै गवय एकपशु होताहै एक पुरुषने
कूं कभी नहीं देखाथा नामसुनाथा उसने किसी जंग-

ली आदमीसे पूछा कि गवय कैसा होताहै जंगलीने तो
दिया कि गौकी सदृश होताहै कुछ एक अंतर होताहै
पुरुष एकदिन जंगलमें गया उसने गवयकूं देखा उसगव
देखकर उस वातको स्मरण किया कि गौकी सदृश हो
निश्चय योही गवयहै विचारदेखो गवयका जान लेना
णहै ३ शाब्दप्रमाण दो प्रकारका है वैदिक १ लौकिक
वेदोंने जो कहा सो वैदिक प्रमाणहै जो यों शंका करे कि
ने तो जीव ईश्वरका भेदभी कहाहै और अनेक श्रुति
उपासनादि करके मोक्षका होना कहती हैं और वहुत
अन्नमय कोशकूं आत्मा कहतीहैं तोयो वेदोंका कहा
आपके प्रमाणहै या नहीं इसका उत्तरयों है जो श्रुतिअ
यादि कोशकूं आत्माकहतीहैं और जो कर्म उपास
करकें मुक्ति का होना कहती हैं सबका अभिप्राय यु
अद्वैत ब्रह्मके वोधन करनेकाहै देहादिकूं परमार्थसे आ
कहना और जीव ईश्वरका भेद कहना और कवल क
पासनादिसे मुक्तिका होजाना योश्रुतिका तात्पर्य न
क्योंकिं फिर श्रुतिने निषेधभी किया है कि यो नहींहै
वाक्य करके और वहुत सहस्राणि ऐसी ऐसी अर्थ व
श्रुतिहैं और जो यो शंका करे कि प्रथम श्रुतिने देहा
आत्मा कहा और जीव ईश्वरका भेद कहा फिर उसकूं
षेध किया प्रथमहीं एक निर्गुण ब्रह्मका उपदेश क्यों न कि
इसका उत्तर योंहै जोश्रुति प्रथमहीं ब्रह्मका वोधन क

तो ब्रह्म कूं अतिसूक्ष्म होनेसे इस जीवकूं ब्रह्मका कभी बोध न होता इसलिये श्रुतिने क्रमसे अर्थात् प्रथम कर्म करना कहा फिर उपासना कही और प्रथम अन्नमयादिकूं आत्मा कहा फिर आनंदमयकोशकूं आत्मा कहा जब जिज्ञासुकी बुद्धि आनन्दमयादिकूं विचारते विचारते अति सूक्ष्महुई तब निर्गुण ब्रह्मका उपदेश किया अब विचारो कि श्रुति काअन्नमयकोशादि कूं जो आत्मा कहनाहै और कर्म उपासनासे मुक्ति का होना यों परमार्थ में तो सच्चा नहीं परन्तु निर्गुण ब्रह्म कूं साक्षात् बोधन करने वाली जो बहुत श्रुतिहैं उन्हों की यह सब श्रुति उपयोगी हैं इसलिये वेदका कहा हुआ सब प्रमाण है कोई श्रुति साक्षात् और कोई कर्म उपासनादि द्वारा परम्परा करके बोधन करती हैं मूर्खलोग वेदोंके तात्पर्य कूं नहीं विचारके एक एक देश वेदोंका सुनकर कोई देह कोई इन्द्रिय कोई विज्ञानमय कोशादि कूं आत्मा बताते हैं कोई केवल कर्मसे कोई केवल उपासनादि से मुक्तिका होना कहते हैं समस्त वेदों का तात्पर्य नहीं विचारते पूर्वपक्ष की श्रुतियों कूं प्रमाणदे दे वृथा वाद करते हैं जैसे कोई पुरुष अच्छे वैद्य के समीप बैठा था उस समय एक पुरुष आया उसकूं बहुत चलनेसे हारपन का ज्वर था वैद्यने नाड़ी देखकर कहा कि मोहनभोग खाओ ज्वरजाता रहैगा उसकूं हारपनसे ज्वर था मोहनभोग के खाने से जाता रहा उस

मूर्खने समझा कि विशेष करके धनवाले बीमार होते
उनके लिये यो औषधि बहुत सुन्दर है ऐसा निश्चय
रके सब रोगियों कूं मोहनभोग बताने लगा जिसकूं
पन का ज्वर होवे तो अच्छा होजावे शेष मरजावें ऐसे
बहुत मूर्ख एक एक दो दो ओषधि वैद्यसे सुनकर वै
करने लगे न वैद्यके तात्पर्य कूं विचारा न रोगीके रो
विचारा सबकूं एकही ओषधि बताने लगे दैवयोग से
कोई अच्छा भी होजावे इसी प्रकार मूर्खने वेदके ता
कूं न अधिकारीकूं विचारते हैं केवल आजीविकाके
वैष्णव शैव शाक्तादि अपने अपने मतका उपदेश क
कहदेते हैं कि योही परमतत्त्व है औरों की असूया
देते हैं विचारो कि जो सबकूं एक देवताका उपदेश क
हैं तो क्या सारी अवस्था में सबके एकही गुण सदा र
हैं इस दृष्टान्त कूं भले प्रकार विचारो वैद्य तो सद्गुरु
जगे कि जैसे प्रथम अध्याय में लिखे हैं और वैद्यक
पोथी वेद और शास्त्रों की जगे और रोगी मुमुक्षु की
क्योंकि तीन प्रकार का रोगहै कफ वायु पित्त और ती
रोग इस जीवकूं हैं सत्व रज तमोगुण तमोगुणीके
कर्म रजोगुणी के लिये उपासना सत्वगुणी के लिये
वेदोंनें कहाहै और उस मूर्ख की जगे इस कलियुग
ऐसे गुरु कि जो विना वेदान्त शास्त्रके पढ़ेहुए और
वेदशास्त्रोंका तात्पर्य जाने हुए मूर्खोंकूं चेला करते हैं

कूं केवल अपनी क्षमाही से प्रयोजन है शिष्य दुःख भोगो या नरक भोगो सो शिवजीने पार्वतीजीसे कहाहै॥

श्लोक। गुरवोवहवःसन्तिशिष्यवित्तापहारकाः॥
दुर्लभःसगुरुर्देविशिष्यसन्तापहारकः॥ १॥

तात्पर्य वेद भगवान् का यों है जैसे व्यवहार में मनुष्य सूक्ष्म वात कूं युक्ति करके कहते हैं ऐसे वेद भगवान् भी निर्गुण ब्रह्म कूं युक्ति करके वोधन करते हैं इस वातके स्फुट होने में मनुष्योंकी युक्तकूं लिखते हैं शारीरक भाष्यमें स्थूलारुंधतीन्याय नामकरके यों युक्तिलिखीहै कुवाँरीलड़कीकूं सौभाग्यके अर्थ अरुंधती का दर्शन कराया करते हैं प्रथम उससे कहते हैं कि यो चन्द्र अरुंधती है जब वो चन्द्रकूं जानजाती है फिर कहते हैं कि यों अरुंधती नहीं है यह सात तारे अरुंधती हैं फिर वैसेही निषेध करके कहते हैं कि यह तीन तारे हैं फिर उन तीन तारोंमें से वशिष्ठजीकूं अरुंधती वताते हैं जब वो लड़की वशिष्ठजीकूं भले प्रकार जानजाती है पीछे उसकूं भी निषेध करके कहते हैं कि उस तारे के समीप जो वहुत सूक्ष्म ताराहै सो अरुंधती है जिसके भाग्य अच्छे होते उसको अरुंधती का दर्शन होजाता है अब विचारना चाहिये कि प्रथम चन्द्रादिकूं अरुंधती कहना है उनका अरुंधती के वताने में वचवाक्य उपकारीहैं इसलिये सव प्रमाण हैं जिसके माल

वो लड़की अरुंधती को जानजाती है पीछे उसकूं निश्चय होजाती है कि मेरे माता पिताने जो प्रथम चन्द्र कूं वताया था तात्पर्य उनका अरुंधती के वोधन करनेमें दार्ष्टान्तमें फिर भलेप्रकारविचारना चाहिये योंतो वैदि प्रमाणं कहा और लौकिक व्यास वशिष्ठ आप्तकामा पुरुषों का जो कहा है सो प्रमाणं है लौकिकप्रमाणमें वोही अरुंधती न्यायहै इस समयमें भी आप्तकामं ब्रह्म दी परमहंस संन्यासी विशेष करके हैं और जो इस लोक अच्छे गुण कहे जाते हैं कि जिनकूं सब मतवाले अंगीक करते हैं और वेद वशिष्ठादि का परमसिद्धान्त हैं और क्तिके मुख्य अंतरंग साधन हैं निराकांक्ष शान्ति नि कार सन्तोष कोमलता विवेक वैराग्य निर्वैरता अमान रोपकार क्षमा शम दमादि ऐसे ऐसे गुण और विद्या अं विज्ञान विशेष करके ब्रह्मवादी संन्यासीपरमहंसोंही में पा हैं इसलिये उनकूं आप्तकाम होनेसे उनके वाक प्रमाण हैं ४ किसीसे बूझा कहोजी भोजनकर आये उन्हों ने कहा हम भोजन दिनमें हीं करते हैं और हृष्टपुष्ट देख हैं अर्थसे यों ज्ञान हुआ कि रात्रीकातो इन्होंने निषेध नहीं कियाहै रात्रिकूं भोजनं करते हैं विचारो यो ज्ञान सच्चा या नहीं इसका नाम अर्थापत्ति प्रमाण है५ किसीने कहा तुम कहतेहो इस स्थानमें घटनहीं है इसमें क्या प्रमाण उसने उत्तर दिया घटका लाभ न होनेसे अनुपलब्धि प्र

माण है ६ तात्पर्य इन प्रमाणों के लिखनेका योंहै कि ब्रह्म-के सिद्धकरनेमें ऐसे ऐसे प्रमाण और अनेक युक्तिदृष्टान्त हैं प्रत्यक्ष वादि आदिकूं तो ऐसे ऐसे उत्तर देनेयोग्य हैं कि हे वादी विचार देख ब्रह्म ऐसे ऐसे प्रमाणों से देखनेमें आताहै ॥

और भेदवादी उपासनावालों और कर्मवादी आदिकूं यो उत्तर देना योग्यहै जैसे वेद की दृष्टिसे तुम सूतकी आदि और परमेश्वर कादास मानते हो ऐसेही वेदने भी कहाहै तू ब्रह्महै जो यो कहो हम अभी इसयोग्य नहीं हैं ऐसा कहैं मैं ब्रह्महूं हमबूझते हैं किसी प्रतिबन्ध से तुम कूं महावाक्यार्थ अर्थात् मैं ब्रह्महूं यो अपरोक्ष न होती यो कहो वेदान्तशास्त्र का श्रवणादि और मैं ब्रह्महूं ऐसी अनेक उपासना करनी कहां निषेधहै और विचारो अभ्यास अनजान वस्तुका करतेहैं और अमद उपासना करने में छंदोग्य उपनिषदादि गीता भाष्यादि बहुत ग्रंथहैं उनमें ऐसी ऐसी उपासना करनेमें छंदोग्य उपनिषदादि गीता भाष्यादि बहुत ग्रंथहैं उनमें ऐसी ऐसी उपासना करने में ब्रह्महूं मैं ईश्वर हिरण्यगर्भ विराट हूं भले. प्रकार ब्रह्म लोकादि फलक सहित लिखीहैं और भेदउपासना में बहुत जगे दोषक हेहैं और भलेप्रकार विचारोपरिपूरण कूं परिछिन्न कहना कितना बड़ाअनर्थहै वेदोंमें प्रकट लिखा है शोक कूं आत्माका जाननेवाला तरताहै १ उसी आत्मा कूं जान करकेमृत्यु कूं

उल्लंघेगा और कोई रस्ता मुक्तिका नहींहै२कर्मधनपुत्र कां्यों
मुक्त नहीं होता है सबका त्यागही करके मुक्त होता है३ स्थ
ज्ञान के विना मुक्ति नहीं होती है ४ ऐसी ऐसी अर्थ वा्त्यग
बहुत श्रुति हैं फिर तुम कूं मैं ब्रह्म हूं इस अर्थ ग्रहण कर
रने में क्या करना योग्य है वेदों का तात्पर्य्य सुनो कर्मप्र
करके तमोगुण का नाशहोताहै निद्रा, आलस्य, प्रमादा वा
तमोगुण का कार्य है प्रातःकाल के स्नानादि कर्म करने मुत्त
उनका नाश होता है व्रतादिक करने स इन्द्रियादि का द क
मन होता है दानादि करनेसे पदार्थों में से आसक्ति दूरहोमुत्ति
तीहै तीर्थादि करने से घरके लोगों से प्रीति कमहोतीहै प श्रु
रदेश में जाकर बुद्धिबढ़तीहै तीर्थों में महत् पुरुषों का स
मागम होता है उनके सत्सङ्ग करने से संसार से चि
उपराम होता है और भी बहुत इस प्रकारके क
कार्य्य हैं चित्तसे विचारने योग्य है अन्तःकरण का अ
विषयों से उपराम होना इसी कूं अन्तःकरण की शुद्धित
कहते हैं उपासना से रजोगुण का नाश होताहै विक्षेपत्या
तृष्णा लोभादि रजोगुण का कार्य्य है ध्यानादि करकेस
उनका नाश होता है ऐसे ऐसे साधनों से बड़ा जो सत्वाहै
गुण उसकूं प्रकाशमय शान्तरूप होने से कार्य्य उसका न
विवेक, वैराग्य, शम, दमादि हैं इन साधन सम्पन्न होकर
जगत् ब्रह्म,बन्ध, मोक्ष, नित्यानित्यादिका विचार किया स
वेचार करने से यो ज्ञान हुआ कि ये सत्वादि तीनों गुण क

यां के हैं मायाकूं मिथ्या होने से इन गुणों का जितना का-
है स्थूल सूक्ष्म है सब मिथ्या है और मैं असंग सच्चिदानन्द
त्यमुक्तहूं इसीको ज्ञान कहतेहैं योहीं ज्ञान मुक्तिकाहेतुहै
र परमसिद्धांत तो वेदोंका यों है कि यो जगत् जीव
रप्रतिविम्बके सहित न कभी हुआ है न होगा न है एक,
वाणी करके अगोचर, प्रत्यगात्मा, नित्यानन्दरूप,नि-
मुक्तहै न किसीका नाश,न उत्पत्ति, न देहके साथ सम्बंध
कोई सुख दुःखधर्म वाला, न श्रवण करनेवाला साधक,
मुक्ति की इच्छावाला न मुक्त है तात्पर्य जो जोहै सोहै
श्रुतिका अर्थ है ॥ इतिप्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥

अथद्वितीयोऽध्यायः।

अब अध्यारोप अपवाद न्याय करके निष्प्रपञ्चब्रह्म
त् का प्रपंचकरके फिर मुक्तिकूं सिद्ध करतेहैं मुक्तिमहा
यार्थकेज्ञानसे होतीहै जैसे किसीकूं रज्जुमें सर्पकी भ्रांति
सका दुःख कम्पादि लौकिक वाक्यार्थ के ज्ञानसे नाश
है यहां के स्त्री चन्दन मालादि और परलोकके अमृत,
नचन, देवाङ्गनादि की प्राप्तिसे उसका दुःखनाश
होताहै ऐसे इस जीवके तीन ताप पञ्च क्लेश यहांके
स्वर्गादिके पदार्थों की प्राप्तिसे नाश नहीं होतेहैं और
कम होतेहैं महावाक्यार्थ के ज्ञानसे नाश होतेहैं

महावाक्यार्थ का ज्ञान जब होताहै प्रथम पदार्थका
होजावे कै पदोंका नाम वाक्य होताहै महावाक्य में
पद हैं तत् त्वम् असि इस लिये तत् पदका अर्थ
आगे लिखेंगे उससे प्रथम तत्पदार्थ का लक्षण लि
तत्पदार्थका अर्थात् ब्रह्मका लक्षण दो प्रकारका है त
१ स्वरूप २ सृष्टि स्थिति ३ लयका जो कारण अ
जिससे यो जगत् हुआ है जिसमें ठहर रहाहै प्रलय
जिसमें लय होजाता है सो ब्रह्मका तटस्थ लक्षण है
सत् चित् आनन्दादि स्वरूपलक्षण है जैसे किसी पु
लक्षण श्याम गौर रँग इतनी अवस्था ऐसे नेत्रादि
उसका स्वरूप लक्षण है और जिसके वाहर कुंवा
उसकी हवेली ऐसे वस्त्र पहिररहाहै यो उसका त
लक्षण है तत्पद का अर्थ दोप्रकार का है वाच्य १
२ मायोपहित जो चैतन्य सो तत्पदका वाच्यार्थ है
पहित का अर्थ योंहै माया उपहित यो दो पदहैं यो
मिलके व्याकरण की रीति से मायोपहित यो एक
बोलाजाताहै मायोपहित अर्थात् माया करके युक्त जै
म्ब घटगतजल करके युक्त अथवा जैसे स्फटिक ला
गकी सन्निधीसे लालही प्रतीत होता है ऐसेही शुद्ध
माया की सन्निधीसे ईश्वर प्रतीत होतेहैं जैसे स्फ
लाल रंग करके उपहित लाल स्फटिक कहा जाताहै
बिम्ब घटगत जल करके उपहित प्रतिबिम्ब कहा जा

हीं मायोपहित शुद्ध चैतन्य जगत्कारण ईश्वर कहे तिहैं उपहित का अर्थ यहां भलेप्रकार याद करलेना प्रकार बुद्धिमें निश्चय करलेना आगे वहुत जगे काम गा प्रसंग यों था मायोपहित चैतन्य तत्पदका वाच्यार्थ र मायासे युक्त चैतन्य तत्पद का लक्ष्यार्थहै जैसे प्रति-वसे विम्ब नित्यमुक्त है और शुक्ति भ्रान्तिकाल में भी त नहीं हुई और जैसे स्फटिक लालरंगकी सन्निधि-ळ में भी श्वेतही रहता है ऐसेही शुद्धब्रह्म मायोपहित अविद्योपहित कालमें भी ॥

ा०--अविद्या उपहित ये दोनों पद मिलकर व्याकरण रीतिसे एक अविद्योपहित बोला जाताहै अर्थ यो हुआ व्याकरके उपहित ॥

१ पू०—चैतन्य असंग शुद्धही है माया किसकूं कहते हैं जैसे शुक्तिमें रजत की भ्रान्ति ऐसे चैतन्यमें कारण स्थूल प्रपंच जड़की जो भ्रान्ति इसी का नाम माया सब ब्रह्म है १ यो सब वासुदेव है २ ऐसी ऐसी अर्थ वहुत श्रुतिस्मृति. चैतन्यका भाव और जड़का व कहती हैं चैतन्य प्रदार्थ क्याहै सुनो सत्। चित्। द। शुद्ध। बुद्ध। एक। स्वयंप्रकाश। अनन्त। मुक्त। शान्त। अखंड। अज। अमर। परिपूर्ण। न। निरवयव। असंग। अद्वय। अव्यक्त। अचिन्त्य। । अचल। सनातन। नित्य। आत्मा। परमात्मा।

परमेश्वर। ब्रह्म। प्रत्यगात्मा। ये चैतन्य पदार्थ के
षण हैं और भी चितिज्ञान स्वरूपादि विशेषण
जड़ अज्ञानसे आदि लेकर जो स्थूल पर्यन्त हैं सो स
हैं अज्ञानकूं प्रकृति और गुणोंकी साम्यावस्था औ
अज्ञान भी कहतेहैं सो अज्ञान सत्व, रज, तम, इ
गुणोंवालाहै स्वरूप उसका अनिर्वाच्य है सत् अस
के कुछनहीं कहाजाताहै जो सत् कहैं तो कुछ
नहीं है और असत् कहैं तो प्रतीत होताहै जैसे
समय शुक्ति में रससे अनिर्वाच्य है परंतु ज्ञानसे उस
नका अभाव होने सेवो अज्ञान भाव रूपहै जैसे
व्यवहार में प्रथम कछु भूलजावे फिर याद आजावे
जैसे वालकअवस्थामें तूला ज्ञान का भाव होता है

टी०—तूला ज्ञान योहै जैसे किसी पदार्थ कूं भ
उस में जो कारण और बालक अवस्था में जो
सो तूलाऽज्ञान उसका न्यायशास्त्र और प्राकृत वि
पढ़ने से और लौकिक व्यवहार से नाश होजाता
मूलाऽज्ञान का तौ केवल ब्रह्म विद्यासे नाश होता

मू०—विद्या पढ़करके और व्यवहारादि से उस
का अभाव होजाताहै ऐसे अज्ञान कालमें कहता है
ब्रह्म कूं नहीं जानताहूं ज्ञानकाल में कहता है
ब्रह्मकूं जानता हूं ऐसा ऐसा अनुभव व्यवहार होने
सन्देह प्रतीत होताहै कि एक अज्ञान पदार्थ अ

भाव और अभाव उसके दोनों प्रतीत होते हैं अज्ञान १
ा अविद्या का भेद २ मायोपहित सबल ब्रह्म ३ जीव ४
ईश्वरका भेद५शुद्धब्रह्म ६ ये सब अनादि हैं इनकूं यो
कहाजाताहै ये कबसे हैं और कबसे इनका भेद हुआहै
र शुद्ध ब्रह्म कबसे मायोपहित अविद्योपहितहुये जैसे यो
कहाजाताहै शरीर प्रथम हुआ या कर्म दृष्टान्तयो है बी-
थम हुआ या वृक्ष और जैसे स्वप्नमें जो उपवन,मंदिर,मृग
, शत्रु आदिदीखतेहैं विचारो कि उपवन मन्दिरकी को-
सम्वत मुहुर्त में नींव रक्खी गई है और मित्रादि का
से सम्वत् मुहूर्त में जन्म हुआहै योहीं निश्चय करो
दृष्टांत के पदार्थोंकी व्यवस्था है वैसेही दार्ष्टान्त के
र्थोंमें शुद्धब्रह्म अनादि भी और अनित्यभीहैं और सब
त्य हैं ज्ञानकाल में शुद्ध ब्रह्मके विना सब नष्ट होजा-
वो अज्ञान माया अविद्या भेदसे दो प्रकार का है शुद्ध
प्रधान हुआ माया मलिनसत्व प्रधान हुआ अविद्या
जाताहै रजोगण तमोगण करके जो सत्व गुण नहीं
भाव होता है सो शुद्ध सत्व और रजतमोगुण करके
त्वगुण तिरोभाव होजाता है सो मलिन सत्त्व कहा-
है माया अविद्याका भेद ऐसे समझो जैसे एक पुरुष
के निमित्तसे पाठक याचक कहलाता है और जैसे
स्त्री पिताकी अपेक्षा करके कन्या पतिकी अपेक्षा करके
होंहैं ऐसे वो अज्ञान ईश्वरकी अपेक्षा करके माया और

जीवकी अपेक्षा करके अविद्या कहाजाताहै ऐसा ईश्वर
समझना कि अज्ञानके दोटूक होगये,अथवा उस अज्ञ
शक्ति दो प्रकारकीहै ज्ञानशक्ति १ क्रिया शक्ति २ न
गुण तमोगुण से नहीं दवा जो सत्वगुण सो ज्ञानश मे
क्रियाशक्ति दो प्रकारकी है, आवरणशक्ति १ विक्षेप
रजसत्वगुण से नहीं दवा जो तमोगुण सो आवर्ण मे
और तम सत्त्वगुण से नहीं दवा जो रजोगण सो वि
शक्ति वोही अज्ञान आवर्ण शक्ति प्रधान हुआ अविद्या
विक्षेप शक्ति और ज्ञान शक्ति प्रधान हुआ माया अन
हित चैतन्य ईश्वर कहाजाता है योंही तत्पद का वाते
है और वोही चैतन्य अविद्योपहित जीव प्राज्ञ कहा स
मायोपहित ईश्वर तो माया के वश नहीं हुया।
लिये सर्वज्ञ ईश्वरादिनामकरके कहे गये और अ
हित जीव अविद्या के वश होगया उस अ भू
विचित्रता से नाना प्रकारका होगया इसलिये ण
कहागया जैसे कोई पुरुष शीशेके मकान में बैठा
आपकूं और औरोंकूं भी देखताहै मृत्तिकाके म
बैठाहुआ आपही कूं देखता है कभी बहुत अन्य
अपना आपा भी नहीं देखता है माया में शुद्ध स
धान होनेसे माया शीशेके मन्दिर की सदृश है औ
द्या में मलिन सत्त्व प्रधान होने से अविद्या मृत्तिका
न्दिर के सदृश है माया में प्रतिबिम्ब जो चैतन्य

श्वर अविद्या में प्रतिविम्बजो उसी चैतन्यका सो जीव वहां
म्ब का भेद सूर्य विम्ब और घठ गत जल प्रतिविम्ब-
नहीं समझना ऐसे सम जैसे आकाश का प्रतिविम्ब
ल में प्रथम दृष्टांत में भी कुछ दोष नहीं है परंतु परि-
भेदसा प्रतीत होताहै सो कुछ दोष नहींहै दृष्टांत एक
में होताहै आकाशके दृष्टांत से विम्बका भेद और
च्छिन्नता नहीं प्रतीत होतीहै इस पक्षमें जीवतो एकही है
तु अन्तःकरण की उपाधि से बहुत प्रमाता कल्प रक्खे
अन्तःकरण विशिष्ट चैतन्यकूं प्रमाता कहतेहैं कोई ऐसा
ते हैं अनेक अज्ञान हैं वनवत् जो अज्ञानोंका समुदाय
समष्टि और वृक्षवत् जो एक अज्ञान सो व्यष्टि वोही चै-
अज्ञान।समष्टि।करके उपहित ईश्वर और वोही चैतन्य
ष्टि अज्ञान करके उपहित जीव कोई ऐसा कहते हैं कर-
भूत जो अज्ञान उससे उपहित चैतन्य ईश्वर और अन्तः
ण करके उपहित वेही चैतन्य जीव तात्पर्य्य कारण
धि वाले ईश्वर और कार्य्य उपाधि वाला जीव सबका
रान्त यो है मायोपहित चैतन्य ईश्वर। अविद्योपहित
न्य जीव सो ईश्वर ज्ञान शक्ति करके उपहित जगत् के
त्त कारण विक्षेपशक्ति करके उपहित उपादान कार-
से मकड़ी जालेके प्रति चैतन्य प्रधानता करके तो नि-
कारण और शरीर प्रधानता करके उपादान कारण-
कड़ी का दृष्टान्त श्रुतिने कहाहै कि जिस प्रकार मक-

ड़ी जाले कूं रचती है फिर अपनेमें लय करलेतीहै
परमेश्वर जगत्के कर्त्ता अभिन्न निमित्तोपादान का
अर्थात् नहीं हैं भिन्न निमित्त और उपादान कारण जि
सो अभिन्न निमित्तोपादान कारण इस प्रकार जगत्के
रण ईश्वरहैं ऐसे नहीं हैं जैसे घटके बनाने में कुलाल
निमित्तो पादान कारण है अर्थात् भिन्नहै निमित्त और
दान कारण जिससे सो भिन्न निमित्तोपादान कारणं
तात्पर्य घटके बनाने में मृत्तिका उपादान और
दण्ड चक्रादि-निमित्त है ईश्वर तो आपही उपादा
आपही निमित्त कारण है पूर्वरीतिसे भले प्रकार
रना योग्य है निरीश्वर वादी पूर्वमीमांसकादि कूं
तर्क जगत्के मोहके लिये वाचाल करावें हैं उस
सुनो वो लोग यों कहतेहैं ईश्वरं जो त्रिभुवन कूं र
त्रिभुवनके रचने में क्या क्या चेष्टा करते हैं और
के समय किस प्रकारकी कायाहै जिनकी अर्थात् कि
हुये हुये और क्याहै उपाय और आधार जिनका औ
उपादानहै यों तर्क उनकी अतर्क्य ईश्वर के विषय
है परमेश्वर की रचना में तर्क का अवसर नहीं
परमेश्वर की माया नह घटने के योग्य पदार्थ कूं घ
क्तीहै और मनुष्यकी रचना इन्द्रजालादिमें बुद्धि का
हीं करती है परमेश्वर की रचनामें तो नष्ट बुद्धि तर्क
हैं तो भी उस तर्कके खण्डनके लिये कहाहै जो

भिन्ननिमित्तोपादान कारण प्रकार वो वज्र उनके मुखमें मारना योग्यहै ॥

इस रीति से जगत् का कर्त्ता ईश्वर कूं सिद्ध किया और कारण प्रपंचका यहां तक निरूपण किया जगत्में योनिप्रपंचहैं कारण १ सूक्ष्म २ स्थूल ३ अव सूक्ष्म प्रपंच का निरूपण करते हैं पूर्व सिद्धि किये हुये जो मायोपहित चैतन्य ईश्वर उनसे प्रथम महत् तत्त्व अहंकार की सूक्ष्म अवस्था फिर महत्तत्त्व से अहंकार अर्थात् मैं एकहूं बहुत होजाऊं फिर अहंकारसे आकाश आकाशसे वायु वायु से तेज तेजसे जल जल से पृथिवी अर्थ इन सबका ऐसा करना तत्त्व करके उपहित जो ईश्वर उनसे अहंकार हुआ तात्पर्य योंहैं महत्तत्त्वादि सब जड़ पदार्थ हैं बिना चैतन्य रचना नहीं होसक्ती है निश्चय इसी आत्मा से आकाश हुआहै यो श्रुतिका अर्थहै मायां कूं तीन गुणों वाली होने से कार्य भी उसका आकाशादि पंच तीन गुणों वाले हैं उन अपंजी कृत सूक्ष्म भूत और तन्मात्रा भी कहते हैं इन्हीं पंच भूतों से पंचीकृत स्थूल भूत उत्पन्न हुयेहैं और सूक्ष्मशरीर १७ लिंगवाला उत्पन्न हुवा ॥१७॥ लिंग येहैं ॥

१०–सूक्ष्म शरीर कूं कोई १६ लिंग कोई १७ कोई १९ वाला कहतेहैं लिंगही कूं तत्त्व कहतेहैं इन्द्रियं दश मा-

।। नइ प्रा२-कुमार ...

णपंच अन्तःकरण एक इस प्रकार १६ और इन्द्रिय प्रा मन बुद्धि २ इसप्रकार १७ और इन्द्रिय प्राण १५ मन चित्त अहंकार ४ इसप्रकार १९ परन्तु बहुत १७ तत्त्व कहतेहैं ॥

ॐ मू०—शब्दादिका ज्ञान होताहै जिन इन्द्रियोंसे सो ज्ञाने न्द्रिय पंच और कर्म किया जाताहै जिन इन्द्रियों कर्मेन्द्रिय पंच प्राणादि पंच मन बुद्धि २ आकाश सत्वगुणके अंशसे पृथक् पृथक् पंच ज्ञानेन्द्रिय हुये लिखतेहैं आकाश से श्रोत्र वायु से त्वक् तेजसे चक्षु रसना पृथिवीसे घ्राण और आकाशादि के मिलेहुये गुणके अंशसे अन्तःकरण सो वृत्ति भेदसे चार प्रक है संकल्प विकल्पवाला मन निश्चयवाली बुद्धि अ नवाला अहंकार अनुसंधान वाला चित्त और आका के रजोगुणके अंशसे पृथक् पृथक् पंच कर्मेन्द्रिय आकाशसे वाक वायुसे पाणि तेजसे पाप जलसे पृथिवीसे वायु और आकाशादिके मिले रजोगुण के अंशसे प्राण सो वृत्ति भेदसे प्रकारका है, बाहरको निकलनेवाला न

मुखमें रहने वाला प्राण १ नीचेकूं जानेवाला वायु आ-
दिमें रहने वाला अपान २ सब शरीरमें फिरनेवाला सब
शरीरमें रहनेवाला व्यान ३ खाये पियेकूं सब नाडियोंमें
पहुँचानेवाला सारे शरीर में रहनेवाला समान ४ ऊपरकूं
जानेवाला कण्ठमें रहनेवाला उदान ५ और पंच उप-
प्राण हैं उनका भी इन्हीं पांचमें अंतर्भावहै, उद्गारमें जो
हेतु सो नाग १ नेत्रोंके खोलने मीचनेमें जो हेतु सो कूर्म २
छींकका जो हेतु सो कृकरः ३ जम्भाई लेनेमें जोहेतु सो
देवदत्त ४ सब जगह रहनेवाला धनंजय जो मुरदेकूं फुला
ता है आकाशसे दो इन्द्रिय श्रोत्र और वाक्हेतु यह है
श्रोत्र करके जो आकाश का सद्गुण सो ग्रहण किया
जाता है और वाक्से बोला जाताहै वायुसे दो इन्द्रिय
त्वक् और पाणि हेतु योंहै त्वक् करके तो वायुका जो
स्पर्श गुण उसका ज्ञान होताहै और पाणिसे त्वक्की रक्षा
होतीहै तेजसे दो इन्द्रिय चक्षु और पादहेतु योंहै चक्षु
करके तो तेजका जो गुणरूप उसका ज्ञान होताहै और
पादके मलनेसे चक्षुकी गरमी दूर होतीहै जलसे दोइन्द्रिय
रसना उपस्थ हेतु योंहै रसना करके तो जलका जो गुण
रस उसका ज्ञान होताहै और तरह रहता है और उपस्थ
करके जलका त्याग होताहै पृथिवीसे दो इन्द्रिय घ्राण
और वायुहेतु योंहै घ्राण करके तो पृथिवीका जो गुण

गंध उसका ग्रहण होताहै और वायुसे गंधका त्याग
ताहै, और अन्तःकरण समष्टि पांचों भूतोंके सत्वगुणोंका
अंशसे उत्पन्न हुआहै हेतु योंहै पांचों ज्ञानेन्द्रियोंके विषय
अनुभव करताहै, अन्नमय, प्राणमय. मनोमय, विज्ञान
मय, आनन्दमय, येपंचकोश कारण सूक्ष्म स्थूल शरीरों
के अन्तर्भाव हैं आगे जो कहेंगे स्थूल शरीर सोतो
मय कोश है सूक्ष्मशरीरमें तीन कोशहैं पंच कर्मे
करके सहित जो पंचप्राण सो प्राणमय कोश
पंच ज्ञानेंद्रिय करके सहित जो मन सो मन
कोश और पंच ज्ञानेन्द्रिय करके सहित
बुद्धि सो विज्ञानमय कोश है मनोमय विज्ञानमय
यह भेद मनोमय कोश तो करण और विज्ञानमय
कर्त्ता है क्रियामें कर्त्तादि ये षट्कारक होते हैं ।
कर्म च करणं च संप्रदानं तथैव च । अपादानाधिकरणम्
त्याहुः कारकाणिषट् ॥ और कारण शरीरमें कारण
भूता अविद्यामें जो मलिन सत्व सो प्रिय मोद प्रमोद
करके सहित आनन्दमय कोशहै कोई अज्ञानकूं आ
मय कोश कहतेहैं जो वस्तु प्राप्त नहो और अच्छी
हो उस समयकी वृत्तिकूं प्रिय कहतेहैं १ फिर वोही
जब अपनी होजावे उस समयमें जो आनन्द सो मो
उसके भोगनेमें जो आनन्द वो प्रमोद ३ जो सूक्ष्म

समष्टि व्यष्टि भेदसे दो प्रकारका है वनवत् सूक्ष्म शरी-
रोंका समुदाय समष्टि वृक्षवत् पृथक् पृथक् एक एक
सूक्ष्म शरीर व्यष्टि जैसे उपवन समष्टि और उसी उपवन-
का एक एक वृक्ष व्यष्टिसूक्ष्म समष्टि करके उपहित वोही
मायोपाहित चैतन्य हिरण्यगर्भ कहाजाता है और सूक्ष्म
व्यष्टि करके उपहित वोही अविद्योपाहित चैतन्य तैजस
कहाजाताहै समष्टिव्यष्टि कूं तादात्म्य होनेसे उनकरके
उपहित हिरण्यगर्भतैजसकी भी तादात्म्यताहै जैसे
वन और वृक्ष करके उपहित आकाशमें कुछ भेद नहीं ऐसे
हिरण्यगर्भतैजसमें भेद नहीं और भी दृष्टांत हैं जाति
व्यक्ति सामान्य विशेष नगर मोहल्ला इनका बिना विचार-
से भेद है वास्तव भेद नहीं, जो सूक्ष्म शरीर अविद्या काम
कर्म करके सहित पुर्यष्टक कहाता है सोई लिखतेहैं, ज्ञाने-
न्द्रिय पंच १ कर्मेन्द्रिय पंच २ चारअन्तःकरण ३ पंच-
प्राण ४ पंचसूक्ष्म भूत ५ अविद्या ६ काम ७ कर्म ८ अवि-
द्याका कार्य चार प्रकारका है ब्रह्मलोकपर्यन्त जो पदार्थ हैं
उनमें नित्यबुद्धि होनी १ दुःखोंमें और दुःखोंके साधनोंमें
भी सुखबुद्धि २ देहादि अनात्मा पदार्थों में
आत्मा बुद्धि ३ अपवित्र जो अपने और पुत्रादिके शरीर
उनमें पवित्र बुद्धि ४ काम रागकूं कहतेहैं कर्म तीन
प्रकारका है संचित १ आगामी २ प्रारब्ध ३ अपना किया-

हुआ कर्मफलकूं नहीं देकर जो अदृष्टरूप करके ठहर रहाहै सो सञ्चित १ इस शरीर में जो किया जाताहै सो आगामी २ स्थूल शरीरके जन्म स्थितिका जो हेतु सो प्रारब्ध ३ सञ्चितआगामी कर्मोंके फलका भोग करके उसका विरोध कर्मकरके वा ब्रह्मज्ञानकरके नाश होंजाताहै

और प्रारब्ध कर्मका भोगनेसे नाश होताहै प्रारब्ध पृथक् अविद्यादि पंच क्लेश हैं उनका ब्रह्मज्ञानसे नाश होताहै अविद्या १ अस्मिता २ राग ३ द्वेष ४ अभिनिवेश ५ कारण कार्यकरके आविद्या दो प्रकारकी लिख आये हैं अहंकारकी सूक्ष्म अवस्थाकूं अस्मिता महत्तत्व और सामान्य अहंकार भी कहते हैं राग को कहते हैं द्वेष क्रोधको कहते हैं अपने आप करके फिर उसके त्यागको न सहना इसकूं अभिनिवेश कहते हैं ब्रह्मकूं जान करके सारे क्लेशोंसे छूटजा या श्रुतिका अर्थहै यहां तक सूक्ष्म शरीर की उत्पत्ति लिखी अब स्थूल शरीर की उत्पत्ति लिखते हैं, कृत पंचस्थूल भूतहैं आकाशादिके तामस लेकर अर्थात् बुद्धिमें कल्पना करके प्रथम एक दो दो टूककरे दोमेंसे एककूं पृथक् रक्खे उस चार चार भाग करे फिर उन चारों भागोंको अपने भागको छोड़कर औरोंमें मिला देना यो पंचीकरण

लाताहै जिसका भाग जिसमें सिवाय है वोही कहनेमें आताहै जैसे मनुष्यशरीरकूं पार्थिव कहते हैं, पंचीकृत स्थूल भूतों का जो रचाहुआ स्थूल शरीर उसमें पंचीकृत स्थूल भूतहैं और अपंचीकृत भूतोंके तामस अंशका कार्य स प्रकार है, पंचीकृत जो पृथिवी उसकी पृथिवीका कार्य अस्थि क्योंकि कठिन है जलका कार्य मांस कुतः हजाता है और शिथिलहै तेजका कार्य नाड़ी कुतः ज्वरकी रिक्षा करती है वायुका कार्य त्वक् कुतः स्पर्श करती आकाशका कार्य रोम कुतः काटनेसे दुःख नहीं होताहै चीकृत जो जल उसकी पृथिवीका कार्य शोणित कुतः थिवीकी सदृश रक्तहै जलका कार्य्य शुक्र कुतः श्वेतहै ौर उससे गर्भ होताहै जैसे जलसे सब वस्तुकी उत्पत्ति तेजका कार्य मूत्र कुतः उष्णहै वायुका कार्य स्वेद कुतः हुत दम चलनेसे आजाताहै और वायुसे सूख जाताहै ाकाशका कार्य राल कुतः ऊपरकूं जातीहै और आकाश- ी ऊंचाहै और पंचीकृत जो तेज उसकी पृथिवीका का- आलस्य कुतः आलस्यमें जड़ताहै जलका कार्य क्का- त कुतः जलके स्पर्श स्नानादिसे सुन्दरता होती है तेजका ार्य क्षुधा कुतः अन्नकूं पचातीहै वायुका कार्य तृषा कु- ः ओष्ठ कंठ सूखजाताहै आकाशका कार्य निद्रा कुतः द्रामें निर्विकल्प होजाताहै और पंचीकृत जो वायु

उसकी पृथिवीका कार्य संकोचन कुतः जिस समय मनु
सुकड़ कर बैठे तो भारी और जड़सा होजाता है जल
कार्य चलना कुतः जल भी चलता है तेजका कार्य उ
उछलना कुतः उठने उछलनेमें ऊंचा होताहै और अ
भी ऊपरकूं जाताहै वायुका कार्य दौड़ना कुतः दौ
में बल होताहै और वायुमें भी बल और वेगहै आक
का कार्य पसरना कुतः आकाश भी व्यापक है और प
रनेमें भी व्यापक होताहै अर्थात् फैलता है और पं
कृत जो आकाश उसकी पृथिवी का कार्य कटी
मल रहता है कुतः गंध स्थान है जलका कार्य उद
तः जलका स्थानहै तेजका कार्य हृदय कुतः उष्ण स्
वायुका कार्य कंठ कुतः वायुका स्थानहै आकाशका रूप
शिर कुतः शब्दस्थान है और अनहद शब्द होतप्रका
ताहै और पंचीकृत आकाशका भेद दूसरे प्रकार शीत
उसकी पृथिवीका कार्य भय कुतः भयसे अन्तःकरक्ष
तम प्रधान होजाताहै और तम पृथिवीका भाग अन्य
लका कार्य मोह कुतः जलके स्पर्शसे उत्पन्न होता प्र
सुंदरता उसकूं देखकर मोह होता है तेजका कार्य मे
कुतः क्रोधके समय हृदय भस्म होताहै वायुका कार्य कहा
कुतः वायुभी चंचलहै और कामभी चंचलहै आक कि
कार्य लोभ कुतः आकाशकीभी अवधि नहीं लोभ पुरु
अवधि नहीं ॥

	पृथिवी	जल	तेज	वायु	आकाश
पृथिवी	अस्थि	मांस	नाड़ी	त्वचा	रोम
जल	रक्त	वीर्य	मूत्र	स्वेद	राल
तेज	आलस्य	क्रान्ति	भूक	प्यास	निद्रा
वायु	संकोचन	चलना	उठना उ-छलना	दौड़ना	फइलाना
आकाश	कमरमें	पेटमें	हृदयमें	कंठमें	शिरमें
दूसरी प्रका रे आकाश	भय	मोह	क्रोध	काम	लोभ

शब्द गुण जिसमें रहताहै सो आकाश सावकाशरूप रूपरहित स्पर्शवाला वायु गर्मस्पर्शवाला तेज सो चार प्रकारकाहै अग्नि आदि स्वर्गादि विद्युदाऽऽदि जठराग्नि शीत स्पर्शवाला जल गंधवाली पृथिवी पंच भूतोंके जो लक्षण कहेहैं सो तीनों दोषोंसे रहित हैं जिस लक्षणमें अव्याप्ति अतिव्याप्ति असम्भव ये तीनदोष पाये जावें सो प्रमाणनहीं जैसे किसीने कहा गौ कपिला होतीहै इ-समें अव्याप्ति दोषहै कुतः वहुत गौकपिला नहीं होतीं फिर कहा सींगवाली गो होतीहै इसमें अतिव्याप्ति दोषहै क्यों कि सींगहिरन आदिके भी होतेहैं फिर किसीने कहा एक खुरवालीगो होतीहै इसमें असम्भव दोषहै कुतः यह लक्षण

गौमें सम्भव नहीं होसक्ता वो लक्षण प्रमाण है जोका
दोषसे रहित हो जैसे गौका लक्षण सींग शास्ना और
वाली गौविचारो इसमें कोई दोष नहीं आकाशमें स्थू
गुण शब्द वायुमें दो शब्द स्पर्श तेजमें तीन शब्द स्प
रूप जलमें चार शब्द स्पर्श रूप रस पृथिवीमें पांच श
स्पर्श रूप रस गंध पंचीकृत पृथिवी आदिसे ब्रह्माण्ड हुआ
ब्रह्माण्डमें चौदह लोक भूः भुवः स्वः महा, जनः क्षप
सत्य। ये सात ऊपर ऊपरके लोकहैं और तल। वितल
सुतल। तलातल। महातल। रसातल। पाताल। येछ
७ नीचे नीचेके लोकहैं ब्रह्माण्डसे मनु और शतरू
हुये ब्रह्माण्डमें जो पृथिवी उससे औषधि हुई औषधि
अन्न माता पिताके खायेहुयेका परिणाम जो शोणित
ससे स्थूल शरीर उत्पन्न हुआ शरीर चार प्रकारके हो
नुष्यादिके शरीर जरायुज अर्थात् जरससे उत्पन्न हुये अ
नागादिके शरीर अण्डज अर्थात् अण्डेसे उत्पन्नहुये
जूं जादिके शरीर स्वेदज अर्थात् पसीने से उत्पन्न हुये
वृक्षादि उद्भिज पृथिवीकूं भेदनकरके उत्पन्न हुये और
लसक सनन्दनादि शरीर इन चारों से पृथक्हैं वे मानवी
में हैं सुनाजाताहै ये ब्रह्माजीके मनसे उत्पन्न हु
यह स्थूल शरीर समष्टि व्यष्टि भेद करके
प्रकार का है पंचीकृत पंच महाभूत और

ीकार्य्य ब्रह्माण्डके भीतर जो पंच भूतोंका कार्य स्थूल
शरीरादि का समुदाय यह सब समष्टि और पृथक् पृथक्
स्थूल शरीर व्यष्टि इस थूल समष्टि करके उपहित वही
मायोपहित चैतन्य विराट् कहाजाता है और स्थूल व्य-
ष्टि करके उपाहित वही अविद्योपहितचैतन्य विश्व कहा-
जाताहै समष्टिव्यष्टि कूं जाति व्यक्ति सामान्य विशेष वन-
वृक्षवत् तादात्म्य होनेसे उन करके उपाहित विराट् विश्व-
चेतभी एकताहै इस जीवकी प्रसिद्ध तीन अवस्थाहैं प्रसिद्ध
ये रखनेसे यह अभिप्राय है कोई मरण और मूर्छा ये दो
तावस्था और भी कहतेहैं परन्तु प्रसिद्ध तीन अवस्थाहैं
जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति. जाग्रत्का अर्थ जाननेके लिये प्रथम
णतेन्द्रिय और अन्तःकरण और शब्दादि विषय और बोल-
नादि क्रिया और संकल्पादि अन्तःकरणके धर्म और दि-
ये आदि देवताओंके सहित सबकूं पृथक् पृथक् लिखतेहैं
ह संकेत याद रखना चाहिये एकका अंक जिसके
आगे उसकूं इन्द्रिय वा अन्तःकरण जानना इसीकूं अ-
ध्यात्म कहतेहैं और दोका अंक जिसके आगे उसकूं ज्ञाने-
न्द्रियका विषय वा कर्मेन्द्रियकी क्रिया वा अंतःकरणका
र्म जानना इसीकूं अधिभूत कहते हैं और तीनका अंक
जिसके आगे उसकूं देवता जानना इसीकूं अधिदैव कहतेहैं
इस इन्द्रिय और मनादिके आगे विषय क्रिया धर्म देवता

लिखेहैं उसी उस इन्द्रिय मनादि के विषय क्रिया धर्म देख
हैं शब्दादि पांचकूं विषय और बोलनादि पांचकूं क्रिया
संकल्पादि चारकूं धर्म बोलतेहैं श्रोत्राऽऽदि इन्द्रिय सूक्ष्म
कान नासिकादि जो स्थूल शरीरमें दीखते हैं ये उ
आश्रयहै अर्थात् उनमें रहतेहैं बहुत करके तो बहि
हैं कभी भीतरका भी कुछ ज्ञान होजाताहै श्रोत्र क
रहता है बहुत करके तो बाहर के शब्द कूं सुनता है
कान बन्द करनेसे कुछ शब्द भीतरकाभी सुना जा
श्रोत्र करके सुना जाता है जो शब्द सो दो प्रकार
एक शास्त्रादिका दूसरा भेरी आदिका सो पांचों
रहता है २ दिक् ३ त्वक् सारे शरीरमें रहता
बहुत करके तो बाहरके शीत कोमलादि कूं विषय
ताहै कभी उष्णादि वस्तुके खानेसे भीतरके स्पर्शका
होताहै १ त्वक् करके जो स्पर्श कियाजाताहै सो
पांच प्रकारका है शीत गर्म न शीत न गर्म कठिन
शीत स्पर्श जलमें गर्म स्पर्शतेजमें न शीत न गर्म
वायुमें कठिनकोमल पृथिवीमें और पृथिवीके कार्य
दिमें रहते हैं २ वायु ३ चक्षु नेत्रोंमें कृष्ण तारेके
भागमें रहता है बहुत करके तो बाहरके रक्त
रूपकूं देखता है कभी नेत्रके मीचनेमें
का भी तम प्रतीत होताहै १ चक्षु करके जो

देखनेमें आताहै सो सात प्रकारकाहै शुक्ल नील पीत रक्त हरित कपिश चित्र भेद करके सो पृथिवीमें तो सात प्रकारका और जलमें अभास्वर शुक्ल और तेजमें भास्वर शुक्ल रहताहै २ सूर्य ३ रसना जीभके अग्र भागमें रहता है बहुत करके तो बाहरके मधुरादि रस अनुभव करताहै कभी डकार आनेसे भीतरके रसका भी ज्ञान हो जाता है १ रसना करके जो रसका अनुभव होताहै सो ६ प्रकारका है मधुर अम्ल लवण कटु कषाय पित्त भेद करके सो पृथिवीमें तो ६ प्रकारका और जलमें केवल मधुर रहताहै २ वरुण ३ घ्राण नाकके दो स्वर उनके अग्रभागमें दोके बीचमें रहताहै बहुत करके तो बाहरके गन्धकूं ग्रहण करता है कभी डकार आनेसे भीतरके गन्धकाभी ज्ञान होजाताहै १ घ्राणकरके जो गन्धका ग्रहण किया जाता है सो दो प्रकारका है सुगन्ध दुर्गंध सो पृथिवीमें रहता है २ पृथिवी ३ यहांतक ज्ञानेन्द्रियोंका निरूपण किया वाक् जीभमें रहताहै १ बोलना २ अग्नि ३ पाणि हाथोंमें रहता है १ लेना देना २ इन्द्र ३ पाद चरणों में रहता है १ चनना फिरना २ विष्णु ३ उपस्थ मूत्र करनेका जो शरीर में चिह्न उसमें रहता है १ मैथुन मूत्रत्याग २ प्रजापति ३ वायु मल त्याग करनेका जो शरीरमें चिह्न उसमें रहताहै १ मलकात्याग करना २

मृत्यु ३ यहांतक कर्मेन्द्रियोंका निरूपण किया अ
करण हृदय गोलकमें रहताहै सो वृत्तिभेद करके च
कारकाहै मन बुद्धि चित्त अहंकार मन १ संकल्प वि
मनोराज्यादि २ चन्द्र ३ बुद्धि १ पदार्थोंका नि
करना २ बृहस्पति ३ चित्त १ चिन्तवन करना २ क्षेत्र
अहंकार १ यह मैंने किया यह मेरे करने योग्यहै २
३ अमान अदम्भ अहिंसा क्षमा आर्जव वैराग्य शम
मुक्तिकी इच्छा संतोष औदार्यादि ऐसी ऐसी औ
अन्तःकरणकी सत्वगुणी वृत्ति हैं और तृष्णा दम्भ
अहंकार अशम भोगोंकी इच्छा चपलता अ
रागादि ऐसी ऐसी औरभी बहुत अन्तःकरणकी र
णवृत्ती हैं और निद्रा आलस्य प्रमाद मोहादि अन्तः
की तमोगुणी हैं अर्थात् यह सब अन्तःकरणका
जो संकल्प विकल्पवाली वृत्ति सो मनकी और नि
वाली बुद्धिकी और अनुसन्धानवाली चित्तकी और
मानवाली अहंकारकी वृत्ति, सत्वगुणी वृत्तिसे पु
उत्पत्ति होतीहै रजोगुणी वृत्तिसे पापकी उत्पत्ति
है तमोगुणी वृत्तिसे मूर्खता बढ़तीहै वृथा अवस्था
होतीहै उससे न कुछ इस लोकमें प्राप्ति न कुछ पर
प्राप्ति है पीछे तमोगुणी वृत्ति बहुत दुःखकी हेतु है ॥

भूत	ज्ञानेंद्रिय	विषय	ज्ञानेंद्रियों के देवता	कर्मेंद्रिय	क्रिया	कर्मेंद्रियों- के देवता
आकाश	श्रोत्र	शब्द	दिक्	वाक्	बोलना	अग्नि
वायु	त्वक्	स्पर्श	वायु	पाणि	लेना देना	इन्द्र
तेज	चक्षु	रूप	सूर्य्य	पद	चलना	विष्णु
जल	रसना	रस	वरुण	उपस्थ	मैथुनादि	प्रजापति
पृथ्वी	घ्राण	गंध	पृथ्वी	गुदा	मलत्याग	मृत्यु

श्रोत्रादि इन्द्रियोंके जो देवतादिक आदि ॥

उन करके युक्त श्रोत्रादि करके जो अपने अपने विषयोंका अनुभव होना सो जाग्रत अवस्था यह जो जाग्रत अवस्था और यह स्थूल शरीर मन इन्द्रियादिका आश्रय इन दोनोंका जो अभिमानी जीव सो विश्व कहा जाताहै प्रथमेंभी विश्व विराट्की एकता लिख आयेहैं इसलिये भेदकी निवृत्तिके लिये विश्वकूं विराट्रूप करके देखे १ जाग्रत अवस्थामें जो भोग देनेवाले कर्म उनका उपराम हुये सन्ते और वाहर श्रोत्रादि इन्द्रियोंका उपराम हुये सन्ते जाग्रत अवस्थामें जो देखा और सुना उनहीं संस्कार करके केवल अन्तःकरण करके जो निद्रामें प्रपंचकी प्रतीत सोई स्वप्न अवस्था वोही जाग्रत अवस्थाका अभिमानी जो विश्व सोई स्वप्न अवस्था और सूक्ष्म शरीरका अभिमानी

हुआ तैजस कहाजाता है तैजस हिरण्यगर्भकी एकशुद्ध
तैजसकूं हिरण्यगर्भरूप करके देखे २ जाग्रत स्वप्न
भोग देनेवाले कर्म उनका उपराम हुये सन्ते
सूक्ष्म शरीरोंका जो अभिमान उसके निवृत्ति होने
द्धिका कारणात्मामें जो स्थित होना सो सुषुप्ति अ
मैंने न कुछ जाना सुख करके मैंने निद्राका अनुभव
जो जाग्रतअवस्थामें जिस अवस्थाकी व्यवस्था क
वोही सुषुप्ति है तात्पर्य जिस अवस्थामें बुद्ध्यादि स
होजाते हैं वोही सुषुप्ति है वोही स्वप्न अवस्थाका अ
जो तैजस जो यह सोई सुषुप्ति अवस्था और कारणश
अभिमानी हुआ प्राज्ञ कहा जाता है प्राज्ञ ईश्वरकी ए
प्राज्ञकूं ईश्वररूप करकेदेखे यहही प्राज्ञ तीनों शरीर अ
नो अवस्थाका अभिमान छोड़कर शुद्ध परमात्मा हो
जो यह उपासनाकरे मैं विराट् वा हिरण्यगर्भ वा ई
शुद्धब्रह्महूं इस उपासना करके वैसाही वैसा फल
अर्थात् विराटादिकी उपासना करनेसे विराट् आ
जाताहै ऐसी ऐसी उपासना उपनिषद आदिमें भ
फलके सहित लिखी हैं और भी प्रणवआदि उपासना
ब्रह्मसे लेकर पाषाण आदि मूर्त्ति पर्य्यंत उपासनाहै
पनी सामर्थ्य जाने भेदउपासना वा अभेदउपासना
शास्त्रोंमें से निश्चय करके करे परमेश्वरकी जैसी
करैगा वैसाही वैसा फल होवेगा मुख्य अभेद

शुद्धब्रह्मकीहै और ईश्वर हिरण्यगर्भ विराट्की अभेद
उपासना और विष्णु शिवादि राम कृष्णादिकी भेद उपा-
सना और नामोच्चारणादि पाषाणादि मूर्त्तियोंकी अर्चनादि
सब उपासना उत्तरोत्तर गौणहैं जो अभेद उपासनाशुद्ध
ब्रह्मकी न होसकें तो भेदउपासना श्रीकृष्णचन्द्र महाराजा-
दिकी करनेसे ज्ञानद्वारा मुक्तिमें सन्देह नहीं है जैसे कोई
ह किसी पुरुषकी छायाकूं देखकर दौड़ा उस छायासे
रुषकी प्राप्ति होगई इसीप्रकार मणिप्रभासे आदि
कर और भी बहुत दृष्टान्त हैं, अष्टावक्र जीका
ह वाक्य है कि जिसकी जो मतिहै उसकी वैसेही
ति होगी अर्थात् दासोऽहम् जिसकी मतिहै वो दासही
और ब्रह्माहमस्मि यह जिसकी मतिहै वो ब्रह्मही है ब्रह्म-
द्ब्रह्मैव भवति इस श्रुति से इसप्रकार मायोपहित ब्रह्मका
टस्थ लक्षण निरूपण किया इसीकूं अध्यारोप कहतेहैं
व इसका अपवाद लिखते हैं अधिष्ठान में भ्रान्ता करके।

टी०—जिसमें जो वस्तु कल्पित हो जैसे रज्जुमें सर्प ॥

सू०—जो प्रतीत होना उस भ्रान्ति कूं अधिष्ठान से
तिरेक करके भ्रान्तिका अभाव निश्चय करना जैसे
क्ति में रजत की भ्रान्ति प्रतीत होतीहै शुक्तिका रजत
व्यतिरिक करके यो रजत नहीं है शुक्ति है यो जो रजत
अभाव निश्चय करना इसीकूं अपवाद बाध विलापन
कहते हैं सो बाध तीनप्रकार का है शास्त्र करके युक्ति

करके प्रत्यक्ष करके वेद कहते हैं यो स्थूल सूक्ष्म
नहीं है इस जगत् भ्रान्ति रूप में ब्रह्म से पृथक् कुछ
एक शुद्ध ब्रह्म है इस प्रकार शास्त्र करके प्रपंच से
व्यतिरेक करके प्रपंचका अभाव निश्चय करना यो
करके जगत्का बाधहै १ और घटसे मृत्तिकाका
रेक करके घटका अभाव निश्चय करना इसी प्रकार
व्यतिरेक करके सारे प्रपञ्चका अभाव निश्चय करना
देखने में आताहै इसकूं भ्रान्ति निश्चय करके ब्रह्ममा
श्चय करना यो युक्ति करके जगत्का बाध है यो जग
ब्रह्महै इसकूं इसप्रकार जानना चाहिये ब्रह्माण्ड में
पदार्थ हैं सब में पांच वस्तु हैं है भान होता है प्या
नाम रूप संस्कृत में अस्ति भ्रान्ति प्रियनाम रूप
बोलते हैं प्रथम के तीन अंश सच्चिदानन्द ब्रह्म के हैं
घटादि के नाश हुये भी नहीं नाश होतेहैं और नाम
दो मायाके हैं माया कूं मिथ्या होनेसे यो कार्यभी
नामरूप दोनों अंश नाश होजाते हैं अन्वय व्य
करके ब्रह्ममात्र निश्चय किया जाता है सोई लिखते
एकघट पदार्थ है है भान होताहै प्याराहै ये तीन अंश
ब्रह्मके हैं और नाम घट और रूपकाला लाल गोला
दि ये दो मायाके अंशहैं हैं भान होताहै प्याराहै यो
घटमें अन्वय है फिर घट फूट गया मायाके दोनों
नामरूप जाते रहे घट में माया के दोनों अंशों

तिरेक है और ब्रह्मका फिर भी. अन्वय है कैसे टूक हैं भान होतेहैं, प्यारे है, हैं भान होतेहैं, प्यारे हैं यो ब्रह्मके दोनों अंश वैसेहीहैं फिर उन टूकों का काल पाकर चूर्ण गया मायाके जो अंश नाम रूप थे वे दोनों नाश होगये याके दोनों अंशोंका चूरण में व्यतिरेक है और ब्रह्म- अन्वय है चूरण है भान होता है प्यारा है फिर वो रण भी काल पाकर नाश होगया नामरूप माया के नों अंश नाश होगये चूरणमें मायाके अंशोंका व्यतिरे- है और ब्रह्मका अन्वय है कैसे चूरण का आभावहै भान ताहै प्याराहै ये तीनों अंश जैसे प्रथम घटमें थे वैसेही के अभावमें हैं इसी प्रकार सब पदार्थोंमें अन्वय व्यति- करके ब्रह्म निश्चयकरना तीनों अवस्था में भी अन्वय तिरेक जाना चाहिये जाग्रत अवस्था में स्वप्न सुषुप्ति व्यतिरेक है आत्मा का अन्वय है स्वप्न अवस्था में ग्रत सुषुप्तिका व्यतिरेक है आत्मा का अन्वय है सुषु- अवस्थामें जाग्रत स्वप्न का व्यतिरेकहै आत्मा का अ- य है तुर्या अवस्था में जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति का व्यति- है आत्माका अन्वय है इसीप्रकार बुद्धिमान सब ज- विचार कर प्रसंग योंथा युक्ति करके भी जगत् का है उसका यो क्रमहै समस्त स्थूल प्रपञ्च कूं स्थूल भूतोंमें मिलादे यो निश्चय करे पञ्चभूतों से पृथक् नहीं फिर स्थूलभूतों कूं और सूक्ष्म पंच भूतोंके कार्य

इन्द्रिय मनादि कूं पंच सूक्ष्म भूतों में मिलादे फिर पृथी
जलमें जलकूं तेजमें तेजकूंवायु में वायुकूं आकाश
काश कूं अहंकार में अहंकार कूं महत्तत्त्वमें महत्त
अज्ञान में अज्ञान मिथ्या है जैसे शुक्ति में रजत
ज्ञानकूं शुद्धचैतन्य में मिलादे फिर सदा अभ्यास
करके योही चितवन करता रहै मैं शुद्धब्रह्म सच्चि
परिपूर्ण नित्यमुक्त हूं जो कभी व्यवहारदशामें
प्रतीत होतो वैसेही अन्वय व्यतिरेक करके चै
पृथक् कुछ न जाने जैसे किसी मृगकूं रेती में
न्ति हुई यो जल है वहां गया नेत्र सींग पैरसे भले
निश्चय किया कि यो जल नहींहै फिर मृग उसीजगह
कर जो देखताहै तो वहां फिरभी भ्रान्ति से जल
होताहै परन्तु फिर यो जानताहै कि यो जल नहीं
न्ति है जो पशुकी यो बुद्धि है कि उस मृग
फिर नहीं प्रवृत्त होताहै बुद्धिमानं कि जिसने श्रुति
युक्ति अनुभव करके ब्रह्मका निश्चय किया है वो
संसार कूं सत्यजानेगा संसार का मिथ्याभ्यास
कूं जबतक है कि जबतक प्रारब्ध कर्मका रचा
शरीर नाश नहीं होता है पीछे उसके मुक्तरूप
करके संसार का वाध योही है कि संसार कूं मिथ्या
लेना २ और मैं ब्रह्म हूं यो महावाक्य श्रवण कर
हुआ अपरोक्ष ज्ञान और ब्रह्मकूं साक्षात् करके

जो निवृत्ति सो प्रत्यक्ष बाध हैं ऐसे तीन प्रकार
रके संसार का बाध करना इसकूं अपवाद कहते हैं अ-
रोप अपवाद करके तत् त्वम् पदार्थों का साधन भी हु-
है सोई दिखाते हैं मायासे लगाकर स्थूल समष्टि प्रपंच
ड़ १ और उस करके उपहित चैतन्य २ और दोनों का
धार अनुपहित चैतन्य ३ ये तीनों पृथक् हैं और इन
नों का तप्तलोहेके पिण्डवत् एक प्रतीत होना यो तत्
का वाच्यार्थ है और पृथक् जो अखण्डचैतन्य सो तत्
का लक्ष्यार्थ है और अविद्यासे लगाकर स्थूल व्यष्टि
च जड़ १ और उस करके उपहित चैतन्य २ और
दोनोंका आधार अनुपहित अखण्ड चैतन्य३ ये तीनों
क् हैं और इन तीनोंका तप्तलोहेके पिण्डवत् एक प्र-
त होना यो त्वम् पदका वाच्यार्थ है और पृथक् अखंड
न्य त्वम् पदका लक्ष्यार्थ है इन दोनों तत् त्वम् पदका
्यार्थ कूं ग्रहण करके और. वाच्यार्थ कूं मिथ्या जान-
वाच्यार्थ का त्याग करके तीन सम्बन्ध के सहित ज-
जहद् लक्षण करके. सो यो देवदत्त है इस लौकिक
यवत् तत्त्वमसि यो महावाक्य अखंडार्थ का बोधकहै
सम्बन्धों का अर्थ विना कुछ शास्त्र के पढ़ेहुये भले
र नहीं जाना जाता है न भले प्रकार भाषामें लिखा-
ाहै इसलिये कुछ तात्पर्य लिखे देतेहैं। सामानाधिकर-
१ विशेषण विशेष्यभाव २ लक्ष्यलक्षणभाव ३ स-

मानहै अधिकरण जिसका सो सामानाधिकरण्य जोने
समें रहे उसकूं अधिकरण कहते हैं।किसी ने कहा सो दे, अ
दत्त है सो अर्थात् काशीमें तुमने हमने १६वर्षकी करके
गृहस्थ आश्रम में जोदेखाथा सोई यो अर्थात् अव हरिने
में ३० वर्षकी अवस्थामें जो दीखताहै सो यो देवदत्त ज
काशी १६ वर्षकी अवस्थादि का और हरिद्वार ३०
अवस्थादि का त्याग करके केवल देवदत्तके पिण्ड से
दृष्टि करके यो अर्थ वैठता है कि सो यो देवदत्तहै।क
अर्थकूं कुछ त्यागदेना कुछ रखलेना इसकूं जहद ज
क्षण कहतेहैं सो यो देवदत्त है इस वाक्यका अर्थ जहद
लक्षणा करके होसक्ताहै जैसे इस वाक्यमें जहद जहद
णा है ऐसे और वाक्यों में भी किसीमें जहद लक्षणा
सीमें अजहत् लक्षणाहै तात्पर्य्य जिस वाक्य का
द्धिमें न वैठता हो कुछ विरुद्ध प्रतीत होता हो तो
क्य का अर्थ लक्षणा शक्ति व्यंजनादि करके निश्चय
हैं उन वाक्योंके वहुत उदाहरण लिखनेमें विस्तार
इसलिये थोड़ेसे उदाहरण लिखते हैं और उनके
का यहां कुछ प्रयोजन भी नहीं है जहद् लक्षणा वह
कहे हुये वाक्यार्थ का त्याग करके और वनाकर
करनी जैसे किसी ने कहा गङ्गा में गांवहै वहां से
आओ उसने विचारा गङ्गाजी में गांवका होना नहीं
इस हेतुसे गङ्गाजीके तीरके गांवसे दूधले आया तात

ोने वाले का तीरमें था जहत् लक्षणा से यो अर्थ वनसक्ता
है, अजहत् लक्षणा वहहै कि कहे हुये वाक्यार्थ कूं ग्रहण
करके और भी कुछ अर्थ वनाकर लक्षणा करनी जैसे कि-
ीने कहा कि दूधकी कौवन से रक्षा करते रहना उसने
जहत् लक्षण करके कौवन से भी रक्षाकरी औरों
भी रक्षाकरी क्योंकि तात्पर्य दूधकी रक्षामें था,
से पंकजका अर्थ यों है कि जो कीचसे उत्पन्नहो सो
कज विचारो कीचसे वहुत वस्तु कसेरू आदि उत्पन्न
तेहैं परन्तु पंकज की शक्ति कमल में हीहै; वाक्यार्थके
त्पर्यकूं समझना यो व्यंजना है जैसे किसी स्त्रीका पुरुष
देशकूं जाताथा स्त्रीने चलते समयप्रार्थना करी कि जहां
पका जानाहो उसी जगह मेराभी जन्महोवे अर्थात् आप
जाते ही मेरे प्राण छूट जावेंगे, प्रसंगसामान्याधिकरण्य
थासों सुनो सो और योपद इन दोनों का जैसे देवदत्त का
ण्ड अधिकरण है ऐसे तत् त्वम् इन पदोंका शुद्ध चैतन्य
धिकरण है।तत् त्वम् पदों का सामान्याधिकरण्य संवन्ध
ैसे सो यो ऐसा कहो वा यो सो ऐसा कहो ऐसे तत् त्वम्
ा कहो वा त्वम् तत् ऐसा कहो यो तत् त्वम् पदार्थों का
शेषण विशेष्य भाव सम्वन्धहै, जैसे सो यो इन
दोंका और इनके अर्थोंका लक्ष्य लक्षण भाव सम्वन्धहै
यो ये दोनों पदतो लक्षणहैं और इन लक्षणोंसे जो लखा
वे सो लक्ष्य देवदत्त का पिण्डहै ऐसे तत् त्वम् पदों का

और उनके अर्थोंका लक्ष्य लक्षणभावसम्बन्धहै तत्‌ द
ये पदतो लक्षण हैं और इन लक्षणों से जो लखा जावे न्द
क्ष्य एक शुद्ध चैतन्यहै इस प्रकार तीन सम्बन्ध सि
अखण्डार्थ का वोध होताहै जीवकी जो उपाधि अ
अल्पज्ञाति और ईश्वरकी उपाधि माया सर्वज्ञादि इनदो
उपाधियों का जहद जहद्‌ लक्षणासे त्याग करके ता
तत्‌ त्वम्‌ पदोंके वाच्यार्थ का त्याग करके लक्ष्या
ग्रहण करक केवल एक शुद्ध चैतन्यमें लक्षणा कर
तत्त्वमसि इस महावाक्य का अर्थ अखण्डार्थ
होताहै अखंडार्थ किसकूं कहतेहैं सुनो स्वगत १
वृक्षमें पत्र पुष्पादि का भेद और सजातीय २ जैसे
आम्रादि का भेद और विजातीय ३ जैसेवृक्ष और
णादि का भेद इन तीन भेद करके जो रहित सो अ
अथवा देश काल वस्तु करके परिछिन्न न हो सो अ
सारे व्यापक होनेसे तो ब्रह्मदेश परिछिन्न नहीं और
होनेसे काल परिच्छिन्न नहीं और सबका आत्मा
वस्तु परिच्छिन्न नहीं जो इस शरीरमें सच्चिदानन्द
होताहै वोही ब्रह्महै और जिसकूं ब्रह्म कहतेहैं वोही
दानन्दहै जब ऐसा ज्ञान हुवा तब त्वम्‌पद का अर्थ जो
समझ रक्खा था वो उसी समय जाता रहताहै औ
पदका अर्थ जो परोक्ष था तोभी उसी समय अपरोक्ष
ताहै फिर इस ज्ञानसे जो होताहै सो सुनो जो प्रथम

दका अर्थ जीव समझ रक्खा था सोई अपरोक्ष परमा-
न्द रूप करके शेष रहजाता है इस प्रकार तत्त्व-
सि जो महावाक्यादि उनका अर्थ श्रवण करने से और
न निदिध्यासन करनेसे जो हुआ अपरोक्ष ज्ञान उस
करके अज्ञान की जो निवृत्ति और परमानन्द की
प्ति इसीका नाम मोक्ष है ॥

इति श्रीद्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

कर्मकाण्डी और उपासना वाले स्वर्ग वैकुण्ठादि की
प्तिकूं सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य नाम करके
क्ति कहतेहैं सो नाममात्र मुक्तिहैं अनित्य होनेसे साक्षात्
क्ति नहीं जैसे किसी पुरुषकूं कहना कि यो पुरुषसिंहहै
पुरुष साक्षात् सिंह नहीं उसमें सिंहकेसे गुणहैं ऐसे
क्षात् मुक्तिमें जो गुण दुःखोंकी निवृत्ति और परमा-
न्द की प्राप्ति ये दोनों उनमें भी थोड़े थोड़े हैं दूसरे अध्या-
के अन्तमें जो मुक्ति कही है सो मुक्ति दोप्रकार की है जीव
मुक्ति १ विदेह मुक्ति २ जीवन्मुक्ति तीन प्रकारकी है
ष्ठ १ मध्यम २ कनिष्ठ ३ जीवते हुये उस आनन्दकूं
दा प्राप्त रहना अर्थात् स्वभाव करके निर्विकल्प समाधि
हनी श्रेष्ठ जीवन्मुक्ति १ प्रयत्न करके बहिर्मुख अन्तः

करण कीं वृत्तियों कूं निरोध करना मध्यम जीवन्मुक्ति
यद्यपि दुःख सुखादि अन्तःकरणके धर्म होनेसे आत्मा
साथ उनका सम्बन्ध नहीं है।यो विचार भीहै तोभी दुःखा
के संबंधकरके अन्तःकरणका व्याकुल होजाना यो मन
जीवन्मुक्ति ३ देह पातके पीछे उस आनन्दकूं प्राप्ति
विदेह मुक्ति, श्रेष्ठ जीवन् मुक्तिका योनियम नहीं कि
ज्ञानियोंकूं श्रेष्ठ जीवन्मुक्ति हो जैसे ओषधि करनेसे रोग
शान्ति होतीहै ऐसे प्रयत्न करनेसे श्रेष्ठ जीवन्मुक्तिभी
दन होसक्ती है परंतु कुछ नियम नहीं कि औषधिकरनेसे
यम करके रोग जाता रहता है पुरुषार्थ वादी तो यों ही
हैं कि प्रयत्न मुख्यहै जो श्रेष्ठ जीवन्मुक्ति किसी प्र
करके सम्पादन न होसके तो कुछ विदेह मुक्तिमें
ह नहीं इस बातकूं सिद्ध करते हैं।ज्ञानकी ७ भूमिका
प्रथमकी ज्ञानकी साधनभूमिका हैं इसलिये वेभी ज्ञा
भूमिका कही जातीहैं चौथीमें अपरोक्षज्ञान होता
छिली तीन जीवन्मुक्ति भूमिका हैं प्रथम का
योहै शौचस्नानादि आचार गंगाजीसे आदि लेकर
थोंका सेवन विष्णु शिवादिकी पाषाणादि मूर्तियों
पूजा अश्वमेध यज्ञसे आदि लेकर यथाशक्ति ब्राह्म
तिथि अभ्यागतोंकूं अन्न वस्त्रादि देने ऐसे ऐसे
बहुत कर्म हैं यो प्रथम भूमिका १ सगुण परमेश्वर
णानुवाद सुनकर परमेश्वरमें अनुराग होना और

ईश्वरके भक्त जो साधु ब्राह्मण उनमें प्रीति होनी और मन, वाणी, शरीर, धनसे उनका सत्कार करना जो कदाचित् साधु अपने घर चले आवें तो मनकूं आनन्द होनां यो जानना हमारा वड़ा भाग्य है यो मनसे सत्कार है और वाणीसे ऐसा बोलना महाराज आपका आना वहुत सुन्दर भया आप जंगम तीर्थहो हमारे पवित्र करनेके लिये आप आयेहो और शरीर से हाथ जोड़कर खड़ा होजाना। चरण सेवासे आदि लेकर टहल करनी अथवा और जगह महात्मा ठहर रहे हों वहां जाकर सेवा करनी और धनसे यथा शक्ति अन्न वस्त्रादि देने और नित्याऽनित्यवस्तुका विचारना ऐसे ऐसे कर्मोंसे आदि लेकर और भी वहुत धर्म हैं यो दूसरी भूमिका २ संसार के पदार्थोंकूं दुःखरूप अनित्य जानकर उनसे वैराग्य होना जैसा श्रीरामचन्द्र जीकूं वैराग्य हुआहै वाशिष्ठग्रन्थमें वो कथा प्रथमही वैराग्यप्रकरणमें प्रसिद्धहै और साधनचतुष्टयसंपन्न होकर वेदान्तशास्त्रका श्रवण करना यो तीसरी भूमिका ३ शुक्तिमें रजतवत् संसारकूं मिथ्या जानकर अपने निज स्वरूप का वाध होजाना कि मैं योहूं चौथी भूमिका योहि विदेह मुक्तिमें हेतुहै चौथी भूमिकावाले का लक्षण योहै कि जैसे कोई पुरुष समुद्र के तीर खड़ाहै जो जलकी तरफकूं देखताहै तो जलही जल दीखे है और जबपीठकूं देखताहै तब मन्दिर वृक्षादिही दीखे-

खतेहैं ऐसे जब वो पुरुष अपने स्वरूपका अनुसंधान है रताहै तब संसारका अभाव और अपना स्वरूप प्रत्यक्षात् प्रतीत होताहै और व्यवहार के समय संसारके दुःख सुख शोक मोहादि जैसे पहले थे वैसेही भुने अन्नवत् प्रतीत होतेहैं जैसे भुना अन्न भूख दूर करनेकूं समर्थहै जमनेकूं समर्थ नहीं ऐसे उस ज्ञानीकूं व्यवहार भूमि दुःखादि का हेतु है परन्तु जन्मका हेतु नहीं और अज्ञानी की बराबर उसकूं दुःख सुखभी नहीं होते इस बातकूं अभी आगे दृष्टान्त देकर सिद्ध करेंगे चौथी भूमिकामें ज्ञानी याती चाण्डालके घरमें या काशीमें छूटो आनन्द छूटो या मूर्च्छारोग होकर लोटते पोटते छूटो मुक्तिमें सन्देह नहीं वो मुक्त उसी समय होगया जिससमय उसको ज्ञान हुआ। मूर्च्छादि होनेसे ज्ञानका नाश नहीं होता। जैसे विद्या स्वप्न सुषुप्ति मूर्च्छादिमें भूलभी जाताहै परन्तु कुछ अगले दिन नहीं बढ़ता ४ पांचवीं भूमिका का लक्षण है कि जैसे कोई पावकोश समुद्र में आधे शरीर जलमें खड़ाहो उसकूं बहुत विचारनेसे समुद्रके तीरके मन्दिर वृक्षादि देखा करते हैं वैसे उसकूं संसारका व्यवहार किसीके सुनने देखनेसे प्रतीत होताहै ५. छठीभूमिका गलेतक जलकी कल्पना करलेनी ६ सातवीं भूमिका जलमें प्रवेश होजाना सातवीं भूमिका वालेका शरीर बीसदिन रहता है क्योंकि भोजनादिका अभाव हो

है ७ चौथी भूमिका वालेसे लेकर सातवीं तक एकसे एक सिवाय ब्रह्मवित् कहे जाते हैं, ब्रह्मवित् ४ ब्रह्मविद्वर ५ ब्रह्मविद्वर्यान् ६ ब्रह्मविद् वरिष्ठ ७ मूर्ख योहीं कहते हैं कि जैसा हमने पांचवीं छठी सातवीं भूमिका का लक्षण लिखाहै ऐसे ज्ञानी होते हैं और चौथी भूमिकावालेमें बहुत तर्क करतेहैं उनकी पूर्व पक्षकी तर्कोंका खण्डन वेदान्तशास्त्रमें बहुत लिखा है कुछ एक लेशमात्र यहांभी लिखतेहैं । शंकाः—कि जो खावे पीवे नहीं औरं शरीर इन्द्रियादि करके चेष्टा न करताहो सो ज्ञानी है । उत्तरः—ज्ञान क्या हुवा रोग हुआ ऐसे तो रोगी होते हैं रोगियोंकूं भी ज्ञानी कहा चाहिये । शंकाः—जिसकूं दुःख सुख न प्रतीत होताहो तो ज्ञानीहै ।उत्तर-दुःख सुखका अभाव जड़ पदार्थोंमें होताहै वे ज्ञानी हैं ।शंकाः—संसार का अनुभव न होना यो ज्ञान का लक्षण है । उत्तरः—संसार तो सुषुप्ति मूर्च्छा प्रलयादिमें भी अनुभव नहीं होता वहांभी तो संसारका बाधहै । प्रश्न-फिर संसारका क्या बाध है और क्या ज्ञानका लक्षणहै । उत्तरः—संसार का यो ही बाधहै कि जो दूसरे अध्यायमें तीन प्रकार का बाध लिख आये हैं और ज्ञान का भी योही लक्षणहै कि जबतक जो शरीर प्रारब्ध कर्मका रचा हुआ नष्टनहीं होता तबतक संसारकूं मिथ्या समझना तात्पर्य्य जबतक संसारमें स्वरूपसे मर्दन नहीं होसका क्योंकि मिथ्या पदार्थकूं मिथ्या जानने से

उसका अभाव नहींहोता जैसे बाजीगर के पदार्थ कि जाने से स्वरूप करके मर्दन नहीं होते इस प्रकार सार रहता है परन्तु देहपातके पीछे स्वरूप से भी होताहै इसमें वेद प्रमाण है अन्यथा वाशिष्ठादि ब्रह्मज्ञा इसमें क्या प्रमाण है। शङ्काः—ज्ञात तो होगया फिर कर्म्म का फल दुःखादि क्यों न नाश हुआ। उत्तरः— पुरुष कूं भेदन तो करदिया आगे क्यों चला और कुम्हार ने वर्तन उतारने के लिये चाक घुमाया बर उतार लिया फिर चाक क्यों घूमता है। शङ्काः— संसार कूं स्वरूप से और प्रारब्धकर्म्म कूं क्यों न ना या। उत्तरः—प्रारब्धकर्म्म और यो संसार मिथ्या मुरदेकी नाईं कुछ ज्ञानके विरोध नहीं प्रत्युतज्ञान त्साह बढ़ाने वालेहैं जैसे किसी पुरुषकी मारी हुई लाशें पड़ीहों वो शूर उनको देख देख आनन्द हो शङ्काः—जो ज्ञानी पूर्ववत् संसार को भोग भोक्ता ज्ञानी अज्ञानी में क्या भेद हुआ। उत्तरः—ज्ञानी वक संसारके भोग नहीं भोक्ता जैसे किसीके शिरप बेगार रखदे तो क्या बेगारके उठानेमें उसको उत्सा शङ्काः—बेगारी कूं तो दुःख होताहै जो ज्ञानी कूं भी हुआ तो ज्ञानका क्या फल हुआ। उत्तरः—ज्ञानीका दु क्तिके आनन्द में दबा रहताहै जैसे दो बेगारी हैं ए नताहै कि मैं दोघड़ी में छूटूंगा दूसरा नहीं जानता

किव छूटूंगा हे वादी। विचार देख दुःख दोनों का सम प्रतीत होताहै परन्तु जानने वाले कूं थोड़ा दुःखहै। नहीं जानने वाले कूं बहुत दुःखहै। ऐसे ज्ञानी अज्ञानीके दुःखमें बहुत भेदहै। शङ्का:—तुमतो जैसे प्रथमथे वैसेही अबभी दीखते हो ज्ञान होकर कुछ और प्रकारके न हुये । उत्तरः—जिस समय तुमकूं रज्जु में सर्पकी भ्रांति हुईथी उसकूं देखकर कम्पने लगे थे और गिरकर चोट लग गईथी फिरकिसी के उपदेश और अपनी युक्तिसे रज्जुका अनुभव किया तुम कहो किं आपकी सूरत भी बदलीथी कहताहै कि मेरी सूरत तो न-बदली थी परन्तु अन्तःकरण की वृत्ति बदल गई थी उत्तर और हमारे अन्तःकरणके साक्षी क्या तुमहो जैसे भ्रांति समय तुमकूं कँपाथी पीछे निर्वृत्ति होगई सूरत न बदली ऐसे हमकूं भ्रांतिथी सो निर्वृत्ति होगई अपने अन्तःकरण के हम साक्षी हैं। शंका:—तुम कहतेहो यो जगत् अज्ञानका कार्य्यहै वो अज्ञान तो नाश होगया कार्य्य उसका कैसे बना रहा । उत्तरः—भ्रांति समय जो तुमकूं कँपातीथी और गिरकर चोट लगीथी फिर जिस समय वो भ्रांति दूरहुई कार्य्य उस भ्रांति का वो कँपा और वो चोट उसी समय जाती रही थी शंका:—कहता है कँपा तो दो घड़ी के पीछे और चोट दशदिनके पीछे होगई थी। उत्तरः आश्चर्य की बातहै जो घड़ीभर भ्रान्ति नहीं रही उसका कार्यतो दश-दिन के पीछे गया और हमारा अज्ञान प्रार्द्ध संख्यासे भी

परेकाथा वो नाश हुआहै उसके कार्य्यकूं कहते जो
उसी समय क्यों न जाता रहा शरीर पातके पीछे न न
भी नाश होजावेगा औरभी वहुत दृष्टांतहैं वृक्ष
पीछे वैसाही हरा प्रतीत होताहै और किसी
पात्रमें गन्ध रक्खीहो पीछे निकालने के भी कईघड़ीसे
वनी रहती है और किसीकूं स्वप्नमें सिंहने झड़पान
जाग उठा देखता है कि सिंह नहीं परंतु कंपा दोघड़ीक
जाती है। शंकाः- यो जो तुम भोग भोगतेहो ये है
नष्ट करदेंगे। उत्तरः--जीते हुये चूहेने बिलाईको न ऐ
तो मरा क्या मारेगा और जैसे कोई वज्रलगने से हेग
क्यों वो तुलीकी तीरसे मरेगा जिस कालमें. अज्ञा
हुआ था उस समय तो ज्ञान नाश हुआ नहीं अव
अज्ञान कूं ज्ञानने नाश करदिया उसका कार्य वो
भक्षणादि तुच्छ पदार्थ ज्ञान कूं क्या नष्ट करेंगे
दूसरे जो पुरुष चोर जारकूं जानताहै वे चोर जार
बुरे होने का प्रयत्न नहीं करते और डरते रहतेहैं
प्रयत्नकरेंभी तो वो चैतन्यहैं ऐसे ज्ञानी इन भोगरू
को जानताहै और तीसरे कोई स्त्री नेत्र शरीरादि
सुन्दरहो परन्तु उसकी उपस्थ इंद्रियमें गरमीका वि
जो उसविकारकूं जानताहै उसकूं उस स्त्रीके हाव भाव
नहीं मोहते न वो स्त्री उसके सामने हावभाव कटाक्ष
ऐसे ज्ञानी इस मायारूपी स्त्रीके अवगुणोंकूं जानताहै

जो तुम सदा "ब्रह्माऽहमऽस्मि ब्रह्माऽहमऽस्मि" ऐसा अनुसंधा
न नकरते रहोगे तब जो ब्रह्मज्ञान नष्ट हो जावेगा।उत्तरः-तुम
"ब्राह्मणोऽहम् ब्राह्मणोऽ हम्" इसका सदा अनुसंधान न करो
तो तो भूल जावोगे जैसे तुम अपनी जाति कूं नहीं भूलते
ऐसे हमने एक वेर वस्तुका निश्चय करलिया है वो हमारा
ज्ञान कैसे जाता रहैगा और आपका निश्चयतो झूंठा है
एक युक्ति से जाता रहता है योभी कहता है कि मेरा शरी-
र है और योभी कहता है कि मैं ब्राह्मण हूं कितना विरोध
है ऐसा निश्चय तो आपका विना अनुसंधान के वना
रहेगा और हमारा जो निश्चय है कि सहस्रों श्रुति, स्मृति;
युक्ति और अनुभव करके और तुम सदृश बा-
दियों के मतोंकूं खंडन करके जो निश्चय किया
है वो विना अनुसंधान के जाता रहैगा । शंकाः-
जिनकूं शाप अनुग्रह की सामर्थ्य होतीहै वे ज्ञानी हैं
उत्तरः-शाप अनुग्रह ज्ञान का फल नहीं तपका फलहै
शंकाः-ज्ञान विना तपके कैसे हुआ । उत्तरः-तप दो प्र-
कार का है एक तप शाप अनुग्रह की सामर्थ्य करा देता
है और एक तप ज्ञानकूं उत्पन्न करता है । शंकाः-व्यास
वशिष्ठ, सनकादि भी तो ज्ञानीहैं । उत्तरः-उनके दोनों
प्रकारका तप है हमारे एकही है दूसरा तप न होनेमें कुछ
ज्ञानी की क्षति नहींहै जैसे जौहरी वस्त्रादिकी परीक्षा न
कर सके तो उस जौहरी की क्या क्षतिहै ऐसेही ज्ञानी गंडा

तावीज़ प्रेतादिकों के मंत्रादि न जानता हो तो क्या कर
की क्षतिहै तात्पर्य ऐसी ऐसी तर्कोंका खंडन बहुत वे
शास्त्रमें लिख रहाहै मुक्ति की इच्छावाला ऐसे २ न
बुद्धिको न समाप्तकरे केवल वेदवाक्यमें विश्वास क
जो पुराणादि में जड़भरतादि लिखेहैं कोई कहे
ज्ञानी होते हैं तो क्या उसके मुखमें मारने के लिये
रूप वज्र नहींहै तात्पर्य वेद ऐसाभी कहते हैं जैसे
भरतादि हुये हैं और ऐसा भी कहतेहैं ज्ञानी अपनी अ
वालोंके साथ विहार करता हुआ और सवारियों में
हुआ स्त्रियोंके साथ रमता हुआ वो ज्ञानी अपनी
कुछ नहीं करताहै,वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य से आदि लेक
प्रसिद्ध हैं और जनक चूड़ालादि बहुत स्त्रीतक ज्ञा
हैं क्या सब जड़भरतवत् आचरण करते थे
यों है मूर्ख लोग वे शास्त्रके एक २ देशकूं सुनक
शास्त्रके तात्पर्यकूं न जानकर कुछ २वक्तेहैं उनका
उनके रहो हमको क्या काम है।हम सिद्धान्त कह
थम तो जड़भरतादि भी खाना सोना आदि त्या
काष्ठपाषाणवत् नहीं रहे संगकी भांतिसे उदासीन
क्योंकि संगीलोगों करके बाध होजाताहै और निःसं
कूं प्राप्त होताहै इसलिये सदा सुखकी इच्छावालों
त्यागदेना। ज्ञानकी परीक्षाके लिखे वैराग्य उपरति
हेतु १ स्वरूप २ कार्य ३ अवधि ४ इन चार

करके लिखते हैं वैराग्य के हेतु आदि ये हैं ॥ शब्दादि विषयोंमें दोषदृष्टिहोनी १ त्यागदेना२फिर भोगोंमें दीनता न होनी ३ ब्रह्मलोक कूं तृणवत् समझना ४ उपरति के हेतु आदि ये हैं ॥ यम नियमादि १ अन्तःकरणका निरोध२ व्यवहार का बहुत कम होजाना अर्थात् खाने सोनेमें भी संकोच ३ सुषुप्तिवत् जाग्रत् अवस्था रहनी ॥ बोधके हेतु आदिये हैं ॥ श्रवणादि १ तत्त्वमिथ्या का जानलेना २ फिर ग्रंथिका उदय न होना अर्थात् देहादिमें अहंबुद्धि न होनी ३ जैसे प्रथम देहादि में अहम्बुद्धि थी वैसीही स्वरूपमें दृढ़बुद्धि होजानी४ मुक्तिकी इच्छा वालोंके वैराग्यादि के हेतु आदि तारतम्यता करके रहते हैं क्योंकि सबके कर्म एक प्रकार के नहीं इन सब में कि जो वैराग्यादि के हेतु आदि लिखेहैं उनमें तत्त्वमिथ्याका जान लेना जो बोधका स्वरूप लिखाहै योही मुक्तिका कारणहै और सब ज्ञानियों के योही एक रस है जो वैराग्यादि के हेतु आदि ऊपर लिखेहैं वैसे जो किसीके हों तो बहुत पुण्य का फल है उससे सिवाय कोई पुण्य नहीं और जो किसी प्रति बन्धु करके तीनों एक जगे न देखने में आवें तो उनके फल ऐसे होंगे कि वैराग्य उपरति तो पूर्णहो बोध किसी प्रतिबन्धसे नहो तो मुक्ति नहीं होगी।तपके बलसे ब्रह्म साकार की प्राप्ति होगी और जो बोध है वैराग्य उपरति इस जन्ममें न देखने में आवै तो मुक्ति निश्चय होगी, परन्तु जबतक यो शरीर रहेगा हर्ष-

शोकादि आभास मात्र बने रहेंगे बोधका स्वरूप सबके
यों के एक रसहै वैराग्य उपरति में तारतम्यता है ता
१०० गौ दूध सबका एकरंग एक रस और व्यक्ति
पन मोटापन स्वभावादि पृथक् २ ऐसे १०० ज्ञानी
सबका एकरस और व्यवहार चलनसा भावादि सत्के
गुणोंकी उपाधिसे पृथक् पृथक् अर्थात् किसीके सत्व
बहुत किसीके रजतम बहुतहैं सत्त्वगुणी शुकदेव, वा
जड़भरत, सनकादि, और रजोगुणी जनक, चुड़ाला
तमोगुणी दुर्वासादि सत्त्व रज तमोगुणी बहुत
सत्त्वगुणी, रजोगुणी, तमोगुणी कहे जाते हैं, परंतु
गुण सबके तारतम्यता करके वर्त्तते हैं ॥ ज्ञान
और वैराग्य उपरति सिद्धि लक्ष्मी आदिके न हो
व्यवस्थाहै ज्ञान उपरति वैराग्य सिद्धि लक्ष्मी आदि
फलहै जिसके पूर्ण पुण्य हुआ जैसे जलसे घट भरा
है उसके तो वैराग्य उपरति ज्ञान सिद्धि लक्ष्मी आ
होतेहैं और जो केवल ज्ञान हो वैराग्यादि न हो तो उ
थोड़े पुण्यका फलहै और जो ज्ञान न हो वैराग्य उप
उससेभी थोड़े पुण्य का फल है और जो वैराग्य ज्ञान
न हों सिद्धि लक्ष्मी आदि हों उस से भी थोड़े
फलहै और जो सिद्धि वैराग्यादि न हो केवल
राज्यादि हो उससे भी थोड़े पुण्य का फल है
लगाकर कंगालपर्यंन्त पुण्यकी तारतम्यता

कर लेनी पुण्यकी तारतम्यसे ज्ञानियों के वैराग्यकी भी तारतम्यता कल्पना कर लेनी जो तीनों वैराग्यादि किसी ज्ञानीके देखनेमें आवें तो वो ज्ञानी ऐसाहै जैसा मनुष्योंमें चक्रवर्ति राजा जैसे जड़भरत शुकादि हैं ऐसा नहीं समझना के जो ऐसेही हों वोही ज्ञानी हैं और ऐसोहीं की मुक्ति होती है। शंकाः—फिर ऐसे पुरुषों की शास्त्रमें बहुत प्रशंसा क्यों लिखी है। उत्तरः—ऐसे पुरुषों कूं जीवनमुक्ति का बहु आनन्द रहताहै जैसे चक्रवर्ती राजाकूं मनुष्यानन्द बहुत रहता है और जैसे राजासे जो कमलक्ष्मी आदि वालेहैं उनकूं भी तो आनंद तारतम्यता करके रहताहै और वेभी तो मनुष्यही कहे जाते हैं। ऐसे वैराग्य उपरतिमें कम जो ज्ञानीहैं वेभी ज्ञानीहैं अज्ञानी नहीं। शंकाः-ज्ञानीके लक्षण शास्त्रमें ऐसे ऐसे लिखेहैं क्रोध,शोक, भय न होना, जितेन्द्रिय, क्षमा, वैराग्य, दया, निर्लोभ, दाता, सबका प्यारा होना॥

टी॰—दाता होना अर्थात् अभय दानदेना अभय दान दो प्रकारका है। एकयो अपने शरीर वाणी मनसे किसी भय न देना; दूसरे ज्ञानका उपदेश करके संसारके दुःखोंसे अभय करदेना॥

मू॰। ये ज्ञानके चिह्नहैं ऐसे २ वाक्यों की क्या गति होगी। उत्तरः- ऐसे २ वाक्य प्रथम तो ज्ञान होनेके लिये और ज्ञानके पीछे जीवन्मुक्ति की सिद्धिके लिये ताकी-

दमें हैं एकादशी के व्रतवत् नियम नहीं जो एकके
भी अन्नका मुखमें जापड़े व्रत टूट जावे ऐसेही जो ज्ञान
किसी पापके उदय होनेसे ज्ञानीकूं काम क्रोध आ
तो ज्ञानही जाता रहता जिस कालमें सनकादि महाऋ
श्रीनारायणजी के मिलने के लिये वैकुण्ठकूं गयेथे
यण के पार्षदों ने जब उनकूं भीतर जानेके लिये
किया तब उनको क्रोध आगया फिर शाप देदिया
से योंभी प्रतीत होताहै कामके विना क्रोध नहीं आता
चारो ज्ञान उनका नहीं जाता रहा और यो जो शंका
कि वे ईश्वरथे समर्थथे अर्थात् वे ईश्वरकी टीकारक
में हैं तो मनुष्य कोटीमें ऐसी २ अनेक कथा पुरा
वेदोंमें दुर्वासादि की प्रसिद्धहैं और दूसरे यो कैसे
न्याय है जो समर्थ पुरुषोंकूं ईश्वरोंकूं काम क्रोध
जीवका तो यो अनादि स्वभावहै जीवको काम
आजानेमें क्या आश्चर्यहै । शंकाः-- ज्ञानीका
उपदेश करनेसे क्या कामहै । उत्तरः- ज्ञानीकूं
योंही एक करनेके योग्यहै कि जैसे वने अज्ञानीकूं
त्वका उपदेशकरे। शंकाः-श्रीभगवान् तो यों कहते
कर्मसंगी पुरुषोंकूं कर्मसे न हटावें । उत्तरः- श्रीभग
कर्मसंगी पुरुषोंका उसी जगह विशेषण देरक्खा
अज्ञानी कर्मसंगीकूं ब्रह्मतत्त्वका उपदेश
शंकाः-ज्ञानियोंकी व्यवस्था तो ऐसी २ सुनी

के जब उनको ज्ञान हुआ फ़िर वे किसी से न मिले मौन होकर उत्तराखण्डको चलेगये। उत्तरः-यो लक्षण अवधिका कोई ऐसाभी हुआहो, परन्तु सबका नियम नहीं और दूसरे सत्ययुगादि ऐसे समयथे कि अस्थि आदिमें प्राण-ने रहतेथे और कुछ कविपुरुषोंका नियमहै कि बढ़ाकर लिखतेहैं और जो यो न मानो तो ग्रथोंका बनना उपदेश करना यो विना प्रवृत्तिक कैसे बने। विद्याका लोप हुआ चाहिये वेद श्रीकृष्णचन्द्र महाराज कहतेहैं कि ज्ञानके लिये गुरुजीके पास जावे हे अर्जुन।तुमको वे गुरू उपदेश करेंगे लिखिये जो प्रवर्त होंगे तो उपदेश करेंगे और जो बोलें बत-लावेंगे नहीं दृष्टांत युक्ति न देंगे अथवा उनका पताही लगेगा तो बोध कैसे होगा. वेद कहतेहैं कि आचार्यवान रूप ब्रह्म कूं जानताहै तात्पर्य योहीहै कि मूर्ख वेदशास्त्र-हृदयकूं न जानकर कुछका कुछ वक्ताहै ऐसे २ सिद्धा-त शारीरक भाष्य पंचदशी आदि ग्रंथोंमें श्रुति स्मृति प्रमाण देदेकर सिद्धकर रक्खे हैं जिस किसीके संदेह हो तासे निश्चय करे और जिसकी गुरु वेदांतमें श्रद्धाहै तो संशयविपर्ययरहित होकर निश्चय मुक्त होगा ॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवेदान्तशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

जो किसी पुरुषकूं किसी पापके प्रतिबंधसे महावाक्यका

अर्थ मेंनकर अपरोक्षज्ञान न होवे तो वो फिर साधनकों इस
मअध्याय सु जो विवेकादि चार साधन कहेहैं मुख्य साधन
हैं उनहीं चार कूं आचार्योंने नाना प्रकारसे लाखों श्लोक
और भाषामें कहा है उनहीं चारोंका अर्थ स्फुट होनेके लिये
उनहीं चार साधनोंकूं अब और प्रकारके लिखतेहैं ये
साधन दो प्रकारके हैं अंतरंग १ वाहिरंग २ अंतरंग मुख्य
रंग गौणहै वहिरंग साधन ये कहलाते हैं शौच, स्न
सन्ध्यावन्दन वेदशास्त्रोंका पढ़ना, पाठ करना, तर्पण,
करना, अतिथि अभ्यागतका पूजन करना, सेवा करनी,
ना ऐसे २ औरभी वहुत नित्य कर्म हैं उनके न क
पापहै करनेसे पापकी निर्वृत्ति होतीहै; और पुत्रादि
न्मादि में जातिकर्म श्रद्धादि करने पूर्णमासी संक्रांत
तीर्थोंमें जाना, स्नान दान करना, निष्काम यज्ञकरने
औरभी वहुत नैमित्त कर्महैं और कोई अपनेसे खोटा
शास्त्रसे विरुद्ध होजावे उसकी निवृत्तिके लिये चांद्राय
व्रत और श्रीगंगाजीमेंस्नानादि करने ऐसे २ औ
प्रायश्चित्त कर्म हैं और वद्रीनारायणादि के दर्शन कर
थोंका सेवन करना, पाषाणादि मूर्तियों कूं पूजना
करनी, झांझ घंटादि वजानें, चौके धोती से रोटीखा
खाना, यो न खाना इस वरतनमें खाना इस वरतनमें न
इसके हाथ का खाना, इसके हाथका न खाना, यो
यो क्षत्री वर्णादि, यों ब्रह्मचारी, यो गृहस्थी आदि आ

इस प्रकारके औरभी बहुत बहिरङ्ग साधन हैंपुराणोंमें धर्म शास्त्रादिमें उनका बहुत विस्तार है वहांसे सुनकर संपादन करे परम प्रयोजन उनका अन्तःकरण का शुद्धिहै बहिरंग प्रथम मन्दबुद्धिके लिये है।अन्तरंग बुद्धिमानके लियेहै बहिरंगसाधन अन्तरंग साधनों की इच्छा रखतेहैं अन्तरंग बहिरंगसाधनोंकी इच्छा नहीं रखते और ऐसा जो कहते हैं कि कर्मकांड और उपासनाकांड ज्ञानके साधन हैं वहां जो व्यवस्था है जो उपासना इस प्रकारकी है कि पाषाणादि मूर्तियों का पूजन करना और झांझ घंटा बजाने, परिक्रमा करनी औरभी बहुत ऐसी ऐसी उपासना का बहिरंग साधनोंमें अन्तर्भावहै और परमेश्वरका ध्यान करना प्रेमकरना विषयोंसे एककर चित्तकूं परमेश्वरमें लगाना ऐसी ऐसी उपासना का अन्तरंग साधनों में अन्तर्भाव है। अन्तरंग साधन ये कहलाते हैं मनमें मान नहीं रखना कि ऐसे पण्डित जातिमें ब्राह्मणं धनवाले और अपने गुणोंकी औरोंसे श्लाघा करानेकी इच्छा न रखनी इसका नाम अमानित्वहै १ धर्मध्वज न होना, जो अपनेमें थोड़े गुणहों तो औरोंके सामने बहुत नहीं प्रकट करने ऐसा हम जानतेहैं ऐसीपूजा करते हैं ऐसे ऐसे पाषण्डों का त्याग करना इसका नाम अदंभित्व है २ मन वाणी शरीर से किसीकूं दुःख न देना इसका नाम अहिंसाहै ३ बे प्रयोजन किसी ने आपकूं बुरा बोला अथवा मारभी दिया समर्थ होकर उसकूं कुछ न

कहना यो समझना कि प्रारब्धका भोगहै इसका कुभार
नहीं इसका नाम क्षमाहै४प्रसन्न चेष्टा रखनी नम्र होकार
लना अकड़ ऐंठ कर न चलना नम्र बोलना मन्दमुसके
पूर्वक ऐसा बोले मानोमुखसे फूल झड़तेहैं,दूसरेका क्षुब्
हृदयभी शान्त होजावे इसका नाम कोमलताहै५ गुरु
मन वाणी शरीरकरके उपासना करनी ६ व्यवहार मे
न करना अंतःकरणगत जो दोष हैं उनकूं दूरकरना
नाम अन्तरशौचहै और बहिःशौच जलमृत्तिका का
सन्मार्गमें स्थित रहना जैसे जो जगत् में कहानी है
किये जो होवे हानि। तोभी न छोड़ धर्मकी बानि
इतिहासभी लिखतेहैं एक ब्राह्मण बाल्य अवस्था से
रसेवा करता था कोई उससे पाप बुद्धिपूर्वक नहीं
था एकदिन उसकूं रस्ते में चार आदमियों ने
या जो कुछ उस पै था छीन लिया और कहा कि
मारेंगे ब्राह्मण ने विचारा कि मैंने बाल्यअवस्था से
सेवाकरीहै कोई पाप नहीं किया ये मुझकूं वृथा मा
सो मारो परन्तु जो ये कहैं तो ठाकुर जीको तो
पधार दूं कोई वहां पास जलाशय था
आज्ञा लेकर ठाकुरजीका सिंहासन हाथमें लेकर
हेपरमेश्वर बाल्य अवस्था से आपकी सेवा करीथी
उसका या फल है कि विनापाप मारा जाताहूं।वहां
शवाणी हुई।कि तुमने पूर्व जन्ममें इन चारोंको एक

राथा यो पूजा का फल है जो तुमकूं ये चारों एकवेर
ारतेहैं यो सुनकर चारों आदमी वहां गये बूझाकि तुम
केससे वात करतेथे उसने कहा तुमकूं क्या कामहै जो
ुझकूं मारना है तो मार दो वहुत वेर जो उन्होंने बूझा
फेर सव व्यवस्था ठाकुरसेवादिकी सुनादी चारोंने उसकूं
छोड़ दिया और जोकुछ उससे छीनाथा दे दिया और कहा
के हम चारों तेरे पिछले किये का इसलोक परलोकमें
दला नहीं चाहते ८ देहका निग्रह करना रात्रिका जो वीच
समें डेढ़पहर सोना उससे सिवाय आसन पर सीधा स्ना-
ादि क्रियाके विना वैठकर श्रवणादि करते रहना ९ शब्दादि
षयों से वैराग्य करना १० अहंकार न करना कि मैं
सा वैराग्य वाला हूं ११ जन्म मृत्यु जरा व्याधिमेंदुःख
ौर दोपभीहैं वारम्बार उनका अनुसंधान करते रहना
्योंकि जवतक शरीरकूं किसी रोगने नहीं ग्रसा श्रोत्रादि
न्द्रिय भी वने रहते हैं जरा भी न होवे तवतकही कुछ
ुरुपार्थ हो सकता है कोई कहै कि साहव जव प्यास
ागेगी तवहीं कुँआ खोदलेंगे पीछेकी वात किसने देखी
जैसे प्यास समय वो त्राहि त्राहि करक मरजाता है
सेही जो वने काममें मोक्षका उपायनहीं करते पीछे वही
यवस्था होतीहै १२ पुत्र दारादि में आसक्तिं न करनी
ानित्य जानकर प्रीतिका त्याग करना १३ पुत्रादिके
ःख सुख में यो अध्यासन करना किमैं सुखी दुःखीहूं १४

इष्ट अनिष्टकी प्राप्तिमें समचित्त रहना क्योंकि लाभ
दिन रात्रि ऋतु युगादिवत् बदलतेरहतेहैं अष्टावक्र
हतेहैं कौनसी वो अवस्था और कालहै कि जिसमें प्र
को द्वंद्व, हर्ष, शोक, हानि, लाभ, सुख, दुःखादि न
ते जो परायेवश होनेवाले कार्यहैं उनको जो प्र
होता तो बलराम युधिष्ठिरादि दुःखकरके क्यों
होते १५ परमेश्वर के विषय अनन्य योग करके भक्ति
अर्थात् परमेश्वरके विना नहींहै भजनेकेयोग जिस
ऐसी अव्यभिचारिणी भक्ति करनी तात्पर्य सर्वात्
होना १६ एकांतदेश शुद्धचित्त का प्रसन्न करनेव
जिसजगह सिंह सर्प चौरादि की भीति नहो और
स्त्री आदि करके विक्षेप न होवे उस देशका सेवन
१७ प्राकृत जो जन कि जो स्त्रीकासंग और खाना
दि इसीकूं कहते हैं कि इस शरीरहुयेका. योही
ऐसोंके समीप नहीं बैठना १८ वेदान्त शास्त्रके श्र
विचारने में सदा लगे रहना तत्त्वं पदार्थों की जो
उसी में निष्ठा रखनी तीसरे अध्याय में भी लिख
कि ज्ञानकेहेतु श्रवणादि हैं ज्ञानके होनेमें ये मुख्य
नहैं इसी बात कूं प्रथम तो वेद भगवान् ने कहा है
व्यासजीने भी सूत्र में कहाहै किवारम्वार श्रवण
एकही वेर न करना पंचदशी कारभी कहते हैं कि
वाणी आदिकूं तक सावकाशनहीं देना मरने सोने

दान्त शास्त्रकी चिंता करके कालकूं विचारना तात्पर्य
श्रीकृष्ण श्रीशंकराचार्य्य भगवान् से आदि लेकर सब
आचार्य इसी वातकूं सिद्ध करते हैं कि मुक्ति की इच्छवाले
दान्त शास्त्र वारम्वार श्रवण करना वेदान्त शास्त्रके
बिना और पुराण शास्त्रोंका श्रवण न करना इसका भी
नियम करादिया है क्योंकि बुद्धि एकहै विचल न जावे
सिष्ठजी भी कहतेहैं कर्म वो है जो वन्धन के लिये नहो
विद्या वोहै जो मुक्तिके लिये हो निःकाम कर्मके विना
और कर्मके वल आयासके लिये है ब्रह्मविद्याके विना
और न्यायशास्त्रादि चित्रकारी आदिवत् विद्याहै १९सवसे
सिवाय इस देहका फल मुक्तिकूं समझना मुक्तिके साधनोंमें
से प्रलय करना जैसे किसीके शरीरमें अग्नि लगजावे वस्त्र
ल जलनेलगे जैसे वो गंगा जकूं दौड़ता है जो कोई
रस्ते में एक वात भी करले अथवा लोभ देकर खड़ा
रक्खे तो नहीं खड़ाहोता ऐसे संसारक तापोंमें तापित हुआ
जो पुरुष ब्रह्मविद्या गंगाजीकूं जल्दी प्रसन्न करके प्रा-
प्त हो स्त्री धन वस्त्रादिजो रचे हुये मायाके झूंठे अनित्य
दुःखदायीई पदार्थहैं उनमें भोगबुद्धिकरके पतंगवत् नष्ट
न हो २० ये वीस साधन श्रीकृष्णचन्द्रने गीता शास्त्रमें
कहेहैं और २६ साधन दैवी सम्पत्के कहेहैं उनकूं भी-
जानो अभय होना किसी से इसलोक परलोक में भय
न करना तात्पर्य पापात्माकूं भयहुआ करताहै १अन्तः-

ष्करणकूं भलेप्रकार शुद्ध करना २ ब्रह्मज्ञानका लो
पाय उसमें लगे रहना ३ दान करना यथाशक्ति कुति
पनें पास न हो तो अभय दानदेना ४ इन्द्रियों कूं कि
अपने विषयों से रोकना ५ द्रव्ययज्ञ चान्द्रायणा
तपयज्ञ उपयज्ञ पढ़ना पाठकरना यो यज्ञचित्तवृत्ति
धयोग यज्ञ ऐसे ऐसे यज्ञसे लगाकर ज्ञानयज्ञ पर्यन्त
अपने कूं अधिकारहो करते रहना ६वेदशास्त्रोंका
ढ़ना पाठकरना ७ अपने धर्म का अनुष्ठान करना
मलता ९ अहिंसा १० सत्य बोलना जो प्रत्यक्षादि
करके भले प्रकार सिद्धकर लियाहै ११ क्रोध न
तत्काल पश्चात्काल केवल दुःख का हेतुहै जिस
क्रोध आवे वो समय किसी प्रकार वितावे पीछे वि
उस समय में ऐसा कहता करता तो क्याहो
त्याग करना १३ चित्त कूं शान्त करना १४
सीके अवगुण नहीं कहते लिखा है कि जो किया
वगुणकिसी का कहे तो वरावर का पापी होता
जो कुछ भला कर बढ़ा कर कहे तो दूना पापी
जो अपने सामने किसीके अवगुण कहे प्रथम
पापी जाने १५ दया अर्थात् किसी कूं दुःख न दे
जो बने तो दूसर का निवृत्तकर देना १६ लोलुप
अर्थात् कुछ पदार्थके लिये पामरोंके सामने दी
करनी १७ क्रूर कठोर चित्त न होना १८ खोटे

लोकलज्जा रखनी वहां यो न समझनाकि मेरे निन्दा स्तुति मान अपमान बराबरहैं १९ चपल न होना अर्थात् वृथा क्रिया न करनी २० तेजस्वी रहना राजा आदि के छायामें न दवना जैसे और आदमी हैं ऐसेवेभीहैं २१ क्षमा २२ धैर्य सत्वगुणी अर्थात् दुःख सुख भूंख प्यास लाभ हान्यादिमें चित्त कूं स्थिर करना २३ शौच २४ किसीसे द्रोह न करना २५ चारगुण सम्पादन करने से चित्त प्रसन्न होजाता है चित्तके प्रसन्न होने से समस्त दुःख नाश होजाते हैं जो के आपसे जाति विद्या में बड़ेहैं उन से द्वेष न करना १ बराबरकेसे मित्रता रखनी २ छोटों पर दया करुणा करनी ३ पापी चौर जारों की उपेक्षा करनी ४ आत्माके पय पूजा को अभिमान न रखना कि हम पूजा के योग्य जो दैवी सम्पत्को पुरुष है उसमें ये गुण स्वभाव के रहते हैं जिसमें ये गुण होंगे वो निश्चय मुक्त होवेगा और आसुरी सम्पत् अवगुण दंभ दर्प काम क्रोध लोभादि बहुत हैं गीताशास्त्र में लिखेहैं कुछ थोड़े से इस ग्रन्थमें भी नवें अध्याय में लिखे हैं वे बंधकेलिये हैं उसकूं मुक्त होना है वहां से निश्चय करके उनसे वर्जित रहै देवीसम्पत् के अनुष्ठान करनेसे आसुरी सम्पत्का तिरस्कार होजाताहै आसुरी सम्पत्के वर्जने से दैवीसम्पत् के गुणोंका अनुष्ठान होजाताहै जो लक्षण स्वभाव से ज्ञानिके रहते हैं और साधककूं प्रयत्न करने

से सिद्ध होतेहैं उनकूं इस प्रश्नके उत्तरमें लिखते
प्रश्नः- कैसे पुरुषकूं लोग ज्ञानी कहतेहैं १ और कैहे वि
ज्ञानी बोलताहै २ बैठता है ३ चलता है ४। उत्तरःमित्र
काल में यो पुरुष जितनी मनमें वासना है सबकूं करने
करके निजानन्द करके तुष्ट रहताहै दुःखों में
सुख में सुख नहीं मानता दूर होगये हैं भई ॥
क्रोध जिसके उसकूं ज्ञानी कहते हैं १ शुभ प्रवृ
को प्राप्त होकर किसी जगह प्रीति नहीं करता आ
कूंप्राप्त होकर हर्ष नहीं करता अप्रियकूं प्राप्त होकर कर
नहीं करता साक्षी हुआ बोलता है २ मुक्तिमें यत्नकर्तु
विचारवान् के मनकूंभी जो इन्द्रिय हरलेते हैं
इन्द्रियोंकूं रोककर परमेश्वर परायण हुआ बैठा
३ सारी कामनाका त्याग करके निर्माण हुआ
कामना फिर प्राप्तहों उनमें ममताइच्छा नहीं करता कर
निरहंकार हुआ विचरता रहता है ४ फिर भी ज्ञा
लक्षण और प्रकार करके सुनो यो ज्ञानी का लक्षण
वेद और परवेदभी है उदासीनवत् स्थित हुआ ॥

टी०-उदासीनवत् लिखनेमें यो शंकाहै कि
नही क्योंन कहा समाधान योंहै दो मनुष्य झगड़ा
वालोंमें कोई तीसरा भी उदासीन चला आवे वो
रहै चला जावे तो झगड़े करने वालोंकी कुछ हानि
होती परंतु आत्मा उदासीनवत तीन गुणोंके
द्रष्टाहै जो चला जावे अर्थात् उनका अभिमान छो
झगडे करने वाले भी नहीं रहते इसालियेउदासीनवत्

मू०—गुणों करके नहीं विचलता है यो विचारता रहता है कि गुणवर्त रहेहैं समान है पाषाण सोना निंदा स्तुति मित्र शत्रु मान अपमान जिसके सारे आरम्भोंके त्याग करने का स्वभावहै जिसका उसकूं ज्ञानी गुणातीत स्थित-प्रज्ञ कहते हैं और जो ज्ञानी का केवल स्वसंवेद्य लक्षण भई ॥ सत्वगुणका जो कार्य प्रकाशादि रजोगुणका जो कार्य प्रवृत्ति आदि तमोगुणका जो कार्य मोहादि जो अपने आप प्रारब्ध के बलसे प्राप्तहों तब कुछ हर्ष शोक नहीं करता जो निवृत्त होजावे तब कुछ हर्ष शोक नहीं करता मुक्तिकी इच्छावाले के तो सत्वगुणमें राग हर्ष और रज तमोगुण में द्वेष शोक होता है ऐसे २ साधन गीता शास्त्रादिमें बहुत लिखे हैं तात्पर्य योहै जैसे बने शरीर इन्द्रिय प्राण अंतःकरणकूं नित्य प्रतिदिन सिवाय २ अभ्यास करके निरोध करे वशिष्ठजी कहते हैं जैसे बने हाथसे हाथ दांतसे दांत मलकर हाहाकारादि शब्द करके मनकूं वशकरे विषयाकार अन्तःकरण की वृत्ति सूक्ष्म करने से जो अपना स्वरूप हुआ, हुआ नहीं प्रतीत होता सो स्वरूप ज्ञानद्वारा अपरोक्षहोजाताहै हुई वस्तु न प्रतीत होतीहो इसमें दृष्टान्त कहते हैं जैसे १० लड़कों में पढ़ता हुआ किसी का लड़का उस लड़के का शब्द बाहर से पृथक् भले प्रकार नहीं प्रतीत होता अर्थात् उसकूं उसका पिता दूसरेसे यो नहीं कह सक्ता कि यो मेरा लड़का पढ़ताहै

ऐसेही जिसके इन्द्रियादि अपने अपने विषयों में
होरहे हों उसकूं ज्ञान होना कठिनहै जैसे जो वे १
पढ़ने से चुप होजावें अथवा शनैः शनैः पढ़ें और
लड़का अपने स्वभावके अनुसार पढ़ता रहै तब ल
शब्द निश्चय होसक्ता है ऐसेही जो विषयाकार अन्त
रण की वृत्ति सूक्ष्म होजावे तब अपना स्वरूप भले
प्रतीत होसक्ता है इसलिये अवश्य अन्तःकरण की
सूक्ष्म करदेनी योग्य है इन्द्रियोंके रोकने से अन्त
णकी वृत्ति सूक्ष्म होतीहै इसमें भी दृष्टांत कहतेहैं
किसी तालाब में दश गूल लग रहीहो उसकूं जो
हो तो प्रथम गूल बन्दकरें फिर सूर्यके तपनेसे
सूखजाताहै ऐसे प्रथम इन्द्रियों कूं निरोध करे फिर
रूप सूर्य तपावे इसप्रकार अन्तःकरणकी वृत्ति
होसक्तीहै भला इसबातकी परीक्षाके लिये प्रथम
भरतो ऐसा अभ्यास कर देखो कितनाभेद पड़ताहै
अभ्यास करनेसे नित्य प्रतिदिन उसका फल करा
वत् प्रतीत होताहो फिर उसकूं न करो तो कहो
सिवाय और कौन पशुहै ॥ अन्तःकरणकी वृत्ति
सूक्ष्म होजाना इसीकूं मनोनाश कहतेहैं ऐसे २
करकेयुक्त जो पुरुष सो ज्ञानद्वारा अनायास निरति
आनन्दकूं प्राप्त होताहै ॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिण्यां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ पंचमोऽध्यायः ॥

सत्त्वगुणके वढ़ाने से रजोगुण तमोगुणके कम करने से ज्ञान द्वारा अपने स्वरूप की प्राप्ति होतीहै इसलिये सत्त्वगुणके वढ़ाने रज तमोगुण कम करने के लिये तीनों गुणों का लक्षण लिखतेहैं जिस प्रकार ये तीनों गुण देहके विषय आत्माकूं वन्धन करतेहैं सो सुनो सत्वगुण निर्मल होने से प्रकाशक शान्त रूपहै कोई उपद्रव उसमें नहीं शान्तरूप होने से जो अपना कार्य सुख उसके साथ वन्धन करताहै और प्रकाशक होनेसे प्रकाशकका कार्य जो ज्ञान उसके साथ आत्माकूं वन्धन करताहै मैं सुखी मैं ज्ञानी ये मनके धर्महैं आत्मामें जोड़ देता है रजोगुण का कार्य और वन्धन प्रकार लिखतेहैं:—रजोगुण रागात्मक अर्थात् रागहै आत्मा स्वरूप जिसका और तृष्णा संगकी उत्पत्ति है जिससे सो रजोगुण आत्माकूं कर्मोंमें संग आ० ॥

टी०—जो वस्तु प्राप्त नहीं उसमें अभिलाषाहोनी तृष्णा प्राप्त वस्तु में विशेष आसक्ति होनी संग ॥

मू०—शक्ति करके वन्धन करता रहै तमोगुण तमरूप है सब प्राणियों कूं मोह करने वाला है सो तमोगुण प्रमाद निद्रा आलस्यादि करके वन्धन करता है सत्त्व आदि अपने २ आविर्भाव में जो करतेहैं उनकी शक्तिकूं दिखलाते हैं जिससमय रज तमोगुणकूं तिरोभाव करके सत्त्वगुण आ-

विर्भाव होताहै सो सत्त्व दुःख शोकादिके कारणहुये भी जहां
सुखके अभिमुखकरदेताहै रजोगुण सुखादिके का है औ
सन्ते भी कामोंमें लगा देताहै तमोगुण शास्त्रजन्य होता
ढककरके सुखादिके कारणहुये सन्तेभी प्रमादादिमें होता
देताहै महत पुरुष पूर्व संस्कारसे मिले भी उन्होंने आ
भी किया उपदेश समय चित्त प्रमादमें लगा रहा ज्ञान
हेतुसे वोही तमोगुणहै महात्माने जो कहा उस अ कर्म
धारण किया जिस हेतुसे वोही प्रमाद है यो नियमहै दि
सत्त्वका आविर्भाव होताहै तब रज तम तिरोभाव तेहैं
तेहैं जब रजोगुणका आविर्भाव होताहै तब सत्त्व पुरु
तिरोभाव होजातेहैं जब तमोगुणका आविर्भाव होताहै अन
सत्त्व रज तिरोभाव होजाते हैं जिस कालमें सत्त्वादि यह
में बढ़रहतेहैं उनका स्वरूप लिखते हैं इस शरीरके गुण
द्वारों में जिस समय प्रकाश होता है और अन्तःक जैसे
सुखका आविर्भाव होताहै इस चिह्न से जानना कि राज
सत्त्वगुण बढ़ाहुआ है ऐसेही लोभ प्रवृत्ति कर्मोंका आ देव
अंश मस्पृहा ऐसे ऐसे चिह्न करके जाने कि अब रज ता
बढ़रहाहै और प्रकाश अप्रवृत्तिप्रमाद मोहादिके आवि वृ
में यो जानेकि अब तमोगुण बढ़रहाहै अन्तकाल त
सत्त्व गुणादि का आविर्भाव हो तो क्या २ फल हो च
सोई लिखते हैं जो अन्तकाल में सत्त्वगुण बढ़ाहोवे तो है
देहधारी जीव इसदेह कूं त्यागकरके जो कि पुण्य

जहां मल नहींहै सुख भोगनेके स्थानहैं उनकूं प्राप्तहोता-
है और रजोगुणमें मरकरके कर्मसंगी मनुष्यों में उत्पन्न
होताहै तमोगुणमें मरकरके पशु आदि मूढ़योनि में उत्पन्न
होताहै जिस हेतुसे इस शरीर में अपने आप सत्त्वादि गुण
आविर्भावहोते हैं उसका कारण कहते हैं निर्मल फल जो
ज्ञानसुख सो पिछले सत्त्वगुणी कर्मका फल है रजोगुणी
कर्मका फल दुःखादि है तमोगुणी कर्मका फल अज्ञाना-
दि है सत्त्वगुणसे ज्ञानादि होतेहैं रजोगुणसे लोभादि हो-
तेहैं प्रमाद मोहादि तमोगुणसे होते हैं सत्त्वगुणी आदि
पुरुषोंकूं देह के पीछे क्या फल होताहै प्रथमतो यो कहाथा
अन्तकाल में जो गुण वढ़ाहोवे उसका ऐसा फल होताहै
यहां तारतम्यता का विचार है जे सत्त्वगुणी हैं वे अपने
गुणकी तारतम्यता से ऊपरके लोकों कूं प्राप्त होंगे
जैसे इसलोक में ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्रादिकी और
राजा मंत्री आदिकी तारतम्यता है ऐसेही ऊपर भी
देवता गन्धर्व्वादि ब्रह्मलोकादि लोकों की तारतम्य-
ता है जितनी यहां मनुष्य लोकमें जिसके सत्त्वगुण की
वृत्ति सिवाय रहीहै वो उसी लेखसे ऊपर के लोकोंकूं प्रा-
प्तहोगा इसीप्रकार जो गुणी मनुष्य लोकमें ब्राह्मण और
चक्रवर्त्ति राजासे लगाकर चांडाल कंगाल पर्यन्त उत्पन्न
होवेगा और तमोगुणी पशु आदि योनियों में अर्थात् कीट
आदि सर्पादिसे लेकर गोहंसादिपर्यन्त योनियों में उत्पन्न

होवेगा और जो ज्ञानीहैं वो गुणातीत हैं मुक्त हैं
वो यों जानताहै कि मैं इन गुणोंसे पृथक्हूं गुणही
र्ता है मैं अकर्त्ताहूं गुणोंका द्रष्टा साक्षीहूं परमेश्वर के
गुणातीत मेरे भावकूं प्राप्त होवेगा तात्पर्य्य मुक्त होवे
देवता की पूजा करने और यज्ञ आदि दान तपादि के
अन्नके खानेसे ऐसी ऐसी वहुत वातें हैं सत्त्वादिकी प
होतीहै तात्पर्य जो सत्वगुणी देवता की पूजा करे तो
नना कि यो सत्त्वगुणी है ऐसेही रज तमोगुणी की क
करलेनी और ऐसेही यज्ञदानादि में समझ लेना सत्त्व
पूजा दानादि करनें से सत्वगुण वढताहै इसलिये रजो
तमोगुणी सम्बन्धी पूजादि त्याग देने के लिये सत्त्वगुणी
म्बन्धी पूजादि सेवन करनेके लिये पूजादिकूं सत्त्व रज
गुण भेद करके लिखते हैं ॥ ब्रह्मा,विष्णु, महेश,सूर्य
गणेशादिके यजन करनेवाले सत्त्वगुणी हैं यक्षादि के
जन करनेवाले रजोगुणी है भूत प्रेतादिके यजन करने
तमोगुणी हैं रजोगुणी तमोगुणी ऐसा ऐसा तप
ते हैं कि शास्त्र में तो उसका विधान नहीं और प्राणि
कूं भय का देनेवाला घोर शरीर कूं खेद करनेवाला
वृथा पाषण्डकरके ऐसा तप करते हैं हेतु उसका यों
काम राग दम्भ अहङ्कारादि करके युक्त हैं जैसे कि
स्तिकादिके व्रतादि हैं इस समय में वहुत प्रसिद्ध हैं
उनके श्रीतुलसीदास जीने रामायण में लिखे हैं तात्पर्य

शास्त्रने नहीं विधान किया सो पाषण्डहै शास्त्रकी विधिसे करना तप आदि सत्वगुणी हैं भोजन का भेद कहते हैं:-रसवाला अन्न घृत शर्करा करके युक्त और भोजनके पीछे शरीरमें अपने रसकरके चिरकाल स्थिररहे और स्निग्ध कोमलतर और जिसके देखनेसे चित्तप्रसन्न होजावे देखतेही मन अंगीकार कर लेवे ऐसा अन्न अवस्था उत्साह शक्ति आरोग्य का वढ़ानेवाला सत्वगुणी कूं प्रियहै यज्ञ में ऐसा अन्न देना योग्यहै १ अति कटु अम्ल लवण उष्ण तीक्ष्ण रूक्ष और दाह करनेवाला ऐसा अन्न दुःख शोक रोगका वढ़ानेवाला है और भोजन के पीछे भी दुर्मन करने वाला रजोगुणी कूं प्रियहै अति शब्द सवके साथ जोड़देना २ जिसकूं वने हुये पहर वीत जावें और गत रस ठंढा होजावे और जिसमें दुर्गन्ध आवे वासी जूंठा शास्त्रकरके निन्दित ऐसा अन्न तमोगुणीहै ३ यज्ञका भेद कहतेहैं:—फलकी इच्छा नहींहै जिन्होंके योही विचार करके कि यज्ञ करना वेदविहित है हमकूं करना योग्य है इसप्रकार मनकूं समाधान करके जो यज्ञकरतेहैं सो यज्ञ सत्वगुणी है १ फलका उद्देश करके दंभ करके जो यज्ञ करते हैं सो रजोगुणी है २ शास्त्र विधि करके हीन रजोगुणी तमोगुणी अन्न है जिस यज्ञमें मंत्र दक्षिणा करके हीन श्रद्धा करके रहित जो यज्ञ सो तमोगुणी है ३ तपकूं आगे सत्वादि भेद करके लिखेंगे प्रथम तपकूं मन-

वाणी शरीर भेद करके लिखते हैं:-देवता ब्राह्मण गुरु
कोई महात्मा उनका पूजन करना कोमल रहना हिंसा न
नि पवित्र ब्रह्मचर्य रहना इसकूं शारीरक तप कहते हैं
के आठअंग हैं सबसे वर्जित रहना इसका नाम ब्रह्म
रागबुद्धि करके स्त्रीका स्मरण करना १ कीर्तन करना २
चौहल करना ३ भले प्रकार दृष्टि जमाकर देखना ४ गुप्त
न्तमें बात करनी ५ मनमें संकल्प करना कि यो कैसे प्र
६ यो निश्चय करना कि हम इससे संग करेंगे ७ सा
भ्रष्ट होजाना ८ राग पद सब के साथ जोड़ देना ऐसा
बोलना दूसरे कूं उद्वेग न करने सत्यहो उसकूं प्यारा
परिणाम में सुखका करनेवाला थोड़े अक्षरोंमें कहना
शास्त्रके पढ़ने पाठका अभ्यास रखना इसकूं वाणी
तप कहते हैं २ मनकी प्रसन्नता अक्रूरता मनन क
मनकूं विषयोंसे निरोध करना व्यवहार में माया न क
इसकूं मानसतप कहते हैं ३ इस तीन प्रकार के त
सात्विकादि भेदकरके तीन प्रकार का कहते हैं एकाग्र
करके फल की इच्छा न करके परम श्रद्धा करके ऐसा
तीनप्रकारका तप कियाहै इसकूं सात्त्विक कहतेहैं १
ने सत्कार के लिये किये साधु हैं मान और पूजाके
दंभ करके जो तप किया है सो अनित्य होनेसे
गुणीहै २ विना विवेक के दुराग्रह करके आत्मा कूं
करके अथवा दूसरे के नाशके लिये जो तप करतेहैं

तमोगुणी है ३ दानका भेद कहते हैं हमकूं देना योग्यहै इस बुद्धि करके सुन्दर देश काल में अनुपकारी सुपात्रों कूं जो दान देना सो सत्त्वगुणी १ जो प्रत्युपकारी कूं वा फलका उद्देश करके वा चित्त में क्लेश करके जो दान देना सो रजोगुणी २ अपात्रोंकूं वा अदेश काल में देना और जो सुपुत्रों कूं भी देना तो असत्कार अवज्ञा करके देना यो दान तमोगुणी है ३ कर्मकाभेद कहते हैं फलकी इच्छा न करके यो विचार कर कि कर्मकरना वेदशास्त्र की आज्ञा है नित्य करना चाहिये राग द्वेषके विना अभिनिवेश न रखकर जोकर्म कियाहै सो सत्त्वगुणी १ फलकी इच्छा करके अहंकार करके बहुत आयास करके जो कर्म किया सो रजोगुणी २ पश्चात् भावी धनादि का व्यय हिंसा अपना बल इनकूं नहीं विचार करके केवल मोहसे जो कर्मका आरम्भ करना सो कर्म तमोगुणी ३ कर्त्ताका भेद कहते हैं त्यागदियाहै अभिनिवेश कर्ममें जिसने और गर्वकी जो बात बोलनी उससे रहित धैर्य उत्साह वाला कर्मकी सिद्धि असिद्धिमें निर्विकार ऐसा कर्मकर्त्ता सत्त्वगुणी १ रागी फलकी इच्छावाला लोभी हिंसात्मक अपवित्र हर्ष शोक करके युक्त ऐसा कर्मकर्त्ता रजोगुणी २ प्राकृत अनम्र अवगुणकी शक्तिकूं छिपानेवाला आल-स्य स्वभाव वाला शोकशील दीर्घसूत्री अर्थात् घड़ीके का-मकूं महीना लगावे ऐसा कर्मकर्त्ता तमोगुणी ३ सुखका भेद

कहते हैं तम रजोगुणी वृत्तियों का निरोध कर शास्त्र
सत्त्वगण बढ़ता है कार्य उसका शांति संतोष निरजत
वेचाह कोमलतादि है उस कालमें जो अंतःकरण की
होताहै सो सत्त्वगुणी है प्रथम अन्तःकरण निरोध के काल
तो यो विषकी सदृश प्रतीत होताहै परन्तु थोड़ेदिन
पीछे तो सदा अमृतकी सदृशहै १ इन्द्रियोंका विषयोंका
साथ संबन्ध होनेसे अर्थात् खाने देखने मैथुनादि विष
सुख होताहै सो रजोगुणी उस क्षणमें तो अमृतकी
प्रतीत होताहै पीछे तो विषकी सदृशहै २ निद्रा आलस्य
मनोराज्यादिसे जो सुख होताहै सो तमोगुणी वह इस
का न परलोक का केवल आत्माकूं मोहनेवालाहै
इसलोक स्वर्गादिमें व देवताओं में ऐसा कोई नहीं
शुद्ध प्रत्यंगात्मा के विना कि जो इन गुणोंसे रहितहो
ज्ञान बुद्धि धैर्य श्रद्धादि सत्त्वादि भेदसे गीताशास्त्रमें
प्रकार लिखेहैं और जितना भेद ऊपर लिखा है उन
अर्थ गीतादि के श्रवण से निश्चय होसक्ता है जितनी
शास्त्रोंकि आज्ञा हैकी यो करना यो न करना सबका
यो है कि जिसके करनेसे रज तमोगण बढ़तेहैं वह
करना और जिसके करनेसे सत्त्वगुण बढ़ता है वह
करना बुद्धिमानको विचारना चाहिये कि प्रातःकाल
स्नान ध्यानादि करनेसे रज तमोगुण का नाश
वा नहीं जो जाने कि होता है तो सदा जैसे वने

शास्त्र विहित कर्मोंको करना योग्यहै जिस कालमें रजतमोगुणकी वृत्तियोंका तिरस्कार और सत्त्वगुण की वृत्तियों का आविर्भाव भले प्रकार होजावेगा उस कालमें यो मेरेकूं करना योग्यहै यो अयोग्य है यो रस्ता बन्धदुःखादिका है यो रस्ता सुख मुक्तिका है सब जान जावेगा और वशिष्ठ व्यासादि कूं जो यो समर्थहै सब भूत भविष्यत्काल की व्यवस्था कहदेनी यों सत्त्वगुणका प्रताप है जिसके जितना सिवाय सत्त्वगुण होगा उसके उतनाहीं सिवाय प्रकाश होगा तात्पर्य सत्त्वगुणके बढ़ानेसे सिद्ध स्वर्ग लक्ष्मी आदि भी प्राप्ति होनी बहुत सहजहै और सत्त्वगुणके बढ़नेसे ज्ञानद्वारा मुक्तहोजाता है यों मुख्य फल है ॥

इति श्रीआनन्दामृतवर्षिण्यांपञ्चमोऽध्यायः॥ ५ ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः॥

प्रथम साधन अवस्थामें कर्म उपासना करनी योग्य है ज्ञान में समुच्चय न करना अर्थात् कर्म उपासना ज्ञान तीनों मिलकर मुक्ति होतीहै ऐसा न विचारना श्रीशंकराचार्य महाराजने गीताभाष्यादि ग्रन्थों में सब समुच्चय का खण्डन भले प्रकार प्रमाणपूर्वक कियाहै तात्पर्य इस बात कूं सिद्ध किया है केवल ज्ञान से मुक्ति होतीहै ज्ञानकूं

कर्मउपासनाकी इच्छा नहीं कर्म उपासना कूं ज्ञान शंका
इच्छा है तात्पर्य विना ज्ञांन कर्मउपासना से मुक्ति है द्ष
होती यहां भी इसी वात कूं सिद्ध करते हैं केवल ज्ञयों है
मुक्ति होतीहै।शंका। तप योग यज्ञ स्नान व्रतादि का भी
मुक्ति सुना जाताहै उनकी क्या गति होगी। उत्तर।विद्या
योगादि परम्परा करके मुक्ति के साधन हैं ज्ञान तो जैसे
क्षात् स्वतंत्र मुक्ति का साधन है योही वात श्रीरामका।
जीने भी लक्ष्मणजीके प्रति रामगीता में कही है वे जो प्रति
उपासनावाले केवल कर्मउपासनासे मुक्ति कहतेहैं उपा
बूझनायोग्यहै कि वेदकी हजारों श्रुति द्वैतपर हैं ब्रह्म
क्या गतिहै कर्मउपासनावाले जो बूझे कर्मउपासनापर और
हजारां श्रुतिहैं उनकी क्या गतिहै इस प्रश्नके उत्तर स
ब्रह्मवादी तो यों कहतेहैं कि कर्मकरने से अन्तष्करण व
होताहै उपासनासे चित्तकी एकाग्रता होती है यों कैसे
परम प्रयोजन है फिर ज्ञानद्वारा मुक्ति होती है। तदुक्त होता
धर्मसे विरति योगसे ज्ञाना। ज्ञानसे मोक्षपद वेदवखानमती
यों शास्त्रार्थदिग्विजय शारीरकभाष्यादि ग्रन्थों में दि
है जो वहुत चर्चा करे वह उन ग्रन्थों का श्रवण करे हि
सिद्धांत लिखते हैं केवल ज्ञान मुक्तिका साधना है ज
यों दृष्टांत है जैसे पाकक्रियामें लकड़ी जल वर्तनादि अहं
रम्परा करके गौण साधन हैं ऐसेही कर्मउपासना मुक्तिको र
गौण साधनहै ज्ञान तो साक्षात् मुक्ति का साधन है जो ज्ञान

शंका करे पाकक्रिया में अग्नि गौण रहो जल वर्तनादि मुख्य हैं दृष्टांत में यों आया कर्म मुख्य है ज्ञान गौणहै।उत्तर उसका यों है अविद्या और कर्मका विरोध नहीं कर्मभी जड अविद्याभी जड़ है अन्धकार कूं अन्धकार नहीं दूर कर सक्ता विद्या ज्ञानरूप है योंही ज्ञान अज्ञानकूं दूरकर सक्ताहै जैसे प्रकाश अंधकारकूं इस हेतुसे ज्ञान गौण नहीं होसक्ता। तदुक्तम्॥ हुयेज्ञान वरु मिटे न मोहू। तुम रामहिं प्रतिकूल न होहू। शंका। कर्मगौण रहो ज्ञान मुख्य रहो उपासना कहां गई। उत्तर। जो ऐसी उपासनाहै कि मैं ब्रह्म हूं अर्थात् अभेद उपासना का तो ज्ञानमें अन्तर्भाव है और दासोहम् अर्थात् भेद उपासना का कर्ममें अंतर्भाव है इस प्रक्रिया में ज्ञान कर्म दोही हैं। शंका। आत्मा तो सब शरीरों में परिच्छिन्न प्रतीत होताहै आत्माकूं पूर्णता कैसेहै। उत्तर। परिच्छिन्नवत् आत्मा अज्ञानसे प्रतीत होताहै अविद्याके नाश होनेसे आत्मा पूर्ण जैसाहै वैसाही प्रतीत होने लगता है जैसे सूर्यके आगे बादल होनेसे वा मंदिर आदिकी उपाधिसे धूप परिच्छिन्न प्रतीत होतीहै बादल मकानकी उपाधि दूर होनेसे पूर्ण प्रकाश होजाता है जो आत्माजीव अज्ञान का जो कार्य देहादि में अहंबुद्धि इस करके आपकूं कर्त्ता भोक्ता मानकर मैला होरहाहै ज्ञानके अभ्याससे निर्मल होजाताहै। शंका। जो ज्ञान बना रहा तो अद्वैत की असिद्धिहै। उत्तर। ज्ञानके

अभ्याससे प्रगट होता है जो वृत्तिज्ञान सो अ
नाश करके और आत्माकूं निर्मल करके आपभी
होजाती है जैसे कतकरेणू जलके मलकूं दूर करके
नाश होजातीहै।शंका।आत्मा ज्ञान रूपहै वहां अज्ञान
रहा। उत्तर। ज्ञान स्वरूप आत्मा अज्ञानका विरोधी
वृत्ति ज्ञान अज्ञान का विरोधीहै जैसे बांसमें अग्नि र
परंतु उस की विरोधी नहीं मथन करनेसे उत्पन्न होती
अग्नि सो विरोधी है।शंका।यो संसार प्रत्यक्ष दीखताहै
झूंठा कैसे कहतेहो। उत्तर। संसार स्वप्नकी तुल्य
स्वप्न अपने कालमें सत्यवत् प्रतीत होताहै जाग्रत
सत्यवत् प्रतीत होताहै सत्य असत्यवत् प्रतीत
परमार्थ में दोनों प्रकार नहीं और जैसे देखने मैथुन
जाग्रतमें दुःख सुख होताहै वैसाही स्वप्नमें दुःख सुख
और जैसे स्वप्नके पदार्थ अनित्य हैं वैसेही जाग्रतके
अनित्यहैं तात्पर्य भ्रान्ति कालमें जबतक जगत् स
प्रतीत होताहै कि जब तक अपना स्वरूप सच्चिद
ब्रह्मसे अभिन्न सबका अधिष्ठान नहीं जाना जैसे र
जबतक भ्रमसें प्रतीतहै तबतक शुक्तिके विशेष गु
पृष्ठ त्रिकोणादिनहीं निश्चयकिये सत् चित्रूप आ
सब प्रपञ्च कल्पित है जैसे सोने में झूमके वाली
कल्पितहैं और जैसे घटमकानादिकी उपाधिसे मह
पृथक् २ घटाकाश मठाकाश वनीवच्छिन्न वृक्षावच्छि

काश कहा जाताहै ऐसेही आत्मदेहोंकी उपाधिसे परिच्छिन्न कहाजाताहै और जैसे जब घटमकानादिका नाश होजावे तो केवल महाकाश रहजाता है ऐसे देह समूह अविद्या के नाशहुये आत्माभी पूर्ण रहजाता है सत्त्व तम रजोगुणी-की नानाउपाधिसे जाति वर्ण आश्रमादि आत्मामें कल्प रक्खेहैं जैसे जल स्वभावसे मीठा श्वेतहै उपाधिसे खट्टे न-मके लाल पीलेकी उसमें कल्पना कीजातीहैं स्थूल सूक्ष्म कारण तीनों उपाधियों से आत्मा पृथक् जानना चाहिये जैसे शुद्ध स्फटिक रक्त पीत रंगके योग से वैसाही प्रतीत होता है जैसे धानों कूं मूसले से खोट पिछोड़ कर चावल पृथक् कर लेतेहैं ऐसे पंचकोशरूपी भूसीकूं दूरकरके वि-चाररूप जो पिछोड़ना इस युक्ति करिके आत्माको पंच-कोश तीनशरीरसे पृथक् शुद्ध जानना चाहिये। शंका। तुम आत्माकूं सर्वगत कहतेहो सारे तो नहीं दीखता। उ-त्तर। आत्मा सब कालमें सर्व्वगतहै परंतु शुद्ध बुद्धिकी वृत्तिमें प्रतीत होताहै जैसे प्रतिविम्ब सारेहैं परन्तु स्वच्छ पदार्थ दर्पण जलादिमें प्रतीत होताहै देहइन्द्रिय मन बुद्धि प्रकृति इनसे आत्मा विलक्षणहै ये सब दृश्यहैं उनका जो द्रष्टा साक्षी सो आत्माहै। शंका। तुम आत्माकूं निर्विकार कहते हो आत्मा तो विकारवाला प्रतीतहोताहै क्योंकि मैं चलताहूं वो बोलताहूं ऐसे२ व्यापार से व्यापारी दीखताहै। उत्तर।पृथक्२जो इन्द्रिय मन प्राणादि ये पृथक्२अपने अप-

ने विषयोंमें अपनी अपनी क्रिया में जो प्रवर्त होतेहैं उनके
थ आत्माभी व्यापारीवत् विनाविवेक मूर्खोंकूं प्रतीत
ताहै जैसे बादलके चलतेहुये बालक कहताहै कि च
चलताहै बालकके तो योही निश्चयहै परन्तु विचारवा
भी भ्रान्ति से चन्द्रका चलना प्रतीत होता है और
नाव में बैठेहुये गंगाके तीरके वृक्षादि चलते हुये प्र
होते हैं ऐसे आत्मा भी व्यापारीवत् प्रतीत होताहै
इन्द्रिय प्राणमनादि सब जड़ पदार्थ हैं आत्मा चैतन्य
आश्रयकरके अपने अपने अर्थ में प्रवर्त होतेहैं जैसे सू
निकलनेसे मनुष्यादि अपने २ काम में लगते हैं दे
न्द्रिय गुण कर्मादि अमल सत् चित् आत्मा में विवे
विना अभ्यास कर रक्खेहैं जैसे आकाश में नील
मनादि की उपाधि अर्थात् मैं कर्त्ता भोक्ताहूं ये अ
से आत्मा में कल्प रक्खे हैं जैसे जलका चलना च
कल्प रक्खा है राग इच्छा सुख दुःखादि बुद्धि के हुये
प्रतीत होते हैं सुषुप्ति में बुद्धि लय होजाती है वहां
प्रतीत होते इसलिये रागादि बुद्धिके धर्म हैं आत्मा के
जैसे सूर्य का स्वभाव प्रकाश, अग्निका उष्ण स्वभा
लका शीत स्वभाव, है ऐसे नित्य निर्मल आत्मा का
दानन्द स्वभावहै। सत् चित् आनंद ये तीन पदहैं।
में ये तीनों मिलकर एक सच्चिदानन्द ऐसा बो
आता है सत् जो तीनों काल भूत भविष्यत् वर्तमा

एक रस बना रहता है भाषामें सत्तकूं है कहते हैं और घटपटादि में जो है यों शब्द प्रतीत होताहै सो आत्माही का अंश है यह बात दूसरे अध्याय में जहां अस्ति भाति प्रिय का प्रसंग है वहां भलेप्रकार सिद्ध कर आये हैं और चित् चैतन्यरूप,ज्ञानरूप प्रकाशरूप परन्तु ऐसा प्रकाश न समझना जैसा अग्नि सूर्यादिका है क्योंकि ये तो स्वप्नसुषुप्ति में एक भी नहीं ऐसे समझो जिसके प्रकाश से जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति के पदार्थों का भान होता है अर्थात् जिस प्रकाश करके रूपादि मनादि सुख अज्ञानादि जाने जाते हैं जाग्रत अवस्था में भी आत्मा के प्रकाश के बिना कुछ नहीं प्रतीत होसक्ता परन्तु सूर्यादिकाभी प्रकाश है और स्वप्न सुषुप्ति में तो केवल आत्माही का प्रकाश है इस हेतु से वहां भले प्रकार प्रतीत होताहै कि आत्माका यों प्रकाश है आत्मा स्वयंप्रकाश स्वप्नमें भलेप्रकार प्रतीत होसक्ता है और आनंदरूप जो कि सबसे सिवाय प्यारी वस्तुहै उपनिषद् में याज्ञवल्क्य मैत्रेयी का संवादहै। हे मैत्रेयि। धन आत्मा के लिये प्यारा, पुत्र आत्माके लिये, स्त्री आत्माके लिये तात्पर्य सब पदार्थ आत्माके लिये प्यारे हैं, जो सब पर विपत्ति पड़े तो प्रथम अपने शरीर की रक्षा करता है और ब्रह्मानन्दके लिये शरीर इन्द्रिय प्राण का भी नाश करदेता है इसी हेतुसे प्यारा आत्माहै वोही आत्मा आनन्दरूपहै वह आनन्द रूप रजतमोगुण की वृत्तियों में दब रहाहै।

इस आनन्दरूप का पंचदशी ग्रन्थ में ब्रह्मानन्द के ५ अ-
ध्याय हैं योगानन्द, आत्मानन्द, अद्वैतानन्द, विद्यानन्द
विषयानन्द ये हैं नाम जिनके उनमें भले प्रकार निश्च
होसक्ता है । शंकाः- आत्मातो निर्विकारहै बुद्धि जड़है
जानता हूं यों किसका धर्म । उत्तरः- आत्मा का सत्
त् अंश और बुद्धि की वृत्ति ये दोनों जुड़कर विवेक
विना यों व्यवहार होता है कि मैं जानता हूं आत्मा
जीव जानकर भय कूं प्राप्त होता है और जब यों जाने
मैं जीव नहीं परमात्माहूं तब निर्भय होजाताहै जैसे ज
तक रज्जुमें सर्पजान्ता रहेगा तबतक निश्चय भय रहेगा
वेद वारम्वार कहते हैं जो जीव ब्रह्ममें किंचित् भी
करेगा उसको बड़ा भय होगा विचारो जो जीव ब्रह्म
भेदहै तो पूर्णब्रह्म कैसेंहै जो एक से भेद हुआ तो अ
जीव पशुपक्षी देवता यक्ष आकाशादि से सबसे भेद हु
तो जैसे और है ऐसेही ब्रह्म भी एक देशी हुये और रा
चन्द्र, कृष्णचन्द्र, विष्णु, शिवादि मूर्ति तो परमेश्वर
मायामयहैं वास्तव नहीं इस बात कूं परमेश्वरने अ
मुखसे कहा है।हे लक्ष्मी ! यों मेरा शरीर मायामय है
त्विक नहीं पद्मपुराण में गीताजीके माहात्म्यमें लक्ष्मी
नारायणका सम्वादहै और गीताशास्त्र में परमेश्वर क
तेहैं मुझ अव्यक्त कूं जो व्यक्तिवाला जानते हैं वे
ह । जब कि परमेश्वर आप ऐसा कहते हैं कि विवाद

वातहै परन्तु मूर्ख अपनी मूर्खतासे सच्चिदानन्द एक रस पूर्ण ब्रह्मकूं परिच्छिन्न एक देशी कहैंगे अर्थात् वैकुण्ठ, कैलास, मथुरा, अयोध्यावासी कहैंगे और परमेश्वर के सद्भाव में ऐसी ऐसी चर्चा करैंगे कि कृष्णचन्द्र ने गोवर्द्धन उठा लिया इस हेतु से कृष्णचन्द्र परमेश्वरहैं और जो श्रुति, स्मृत्ति, युक्ति हजारों परमेश्वरके सद्भाव में प्रमाण हैं कि जिन युक्तियोंसे नास्तिकों के मत खण्डन किये जाते हैं जो नास्तिक वेदकूं न परमेश्वर कूं न परमेश्वर के वाक्यों कूं मानता है उसका मत केवल युक्ति करके खण्डन होताहै। मूर्ख उन युक्तियों कूं तो जानते नहीं ऐसी तुच्छ युक्ति देते हैं जिसकूं बालक भी खण्डन करदे गोवर्द्धनके सिवाय कैलास रावणने उठालिया है और हजारों राजा पुराणों में प्रसिद्ध हैं जिनके रथके पहियेके समुद्र बनेहुये हैं। क्या वे परमेश्वर थे और परमेश्वर ने रावणमारा, कंसमारा और अनेक जय करी यो परमेश्वर की क्या स्तुति है अर्थात् निन्दाहै क्योंकि जो परमेश्वर करने कूं न करने कूं औरका और करदेने कूं समर्थ हैं क्या वे ऐसी ऐसी उपाधि करके नाना प्रकार का अपने ऊपर दुःख उठाकर औरों से सहाय ले ले जय करते तदुक्तम्। दोहा। प्रीतिं विरोध समान सन, करिय नीति अस आहि। जो मृगपति वध मेडुकन, भलो कहै को ताहि॥ चौपाई॥ भवन अनेक रोम प्रति जासू। यह प्रभुता कछु बहुत न तासू॥ सो महिमा समुझत प्रभु

केरी। जो वर्णत हीनता घनेरी॥और प्रसिद्ध है कि च
वर्ती राजा कूं एक देशका राजा कहना षट्शास्त्री कूं
चार पोथी का पढ़ाहुआ कहना चार पुत्रवाले कूं एक पु
त्रवाला कहना कितना अनर्थ है और जो यों कहो कि व्या
सदेव वाल्मीकि जी आदिने क्यों परमेश्वर की ऐसी ऐ
स्तुति लिखी हैं सो सुनो जो परमेश्वर कूं सच्चिदानन्द
र्ण ब्रह्म नित्यमुक्त एकरस असंग ऐसा विचारने कूं स
नहीं योंहीं जानता है जैसे मैं उत्पन्न हुआ हूं मेरे मा
पिता स्त्रियादि हैं ऐसेही परमेश्वर माता पिता स्त्रीवाले
और जैसे इस लोक में शरीर मकान उपवनादि सु
सुन्दर जिसके होते हैं और जो शत्रुओं कूं मार मार
जय कूं प्राप्त होता है उसकूं मूर्ख लोग वड़ा कहते हैं इसलि
उन मूर्खोंके लिये व्यासादि जीने परमेश्वर की ऐसी
स्तुति लिख दी और विचारवानोंके लिये वेदान्तमें
स्वरूप परमात्माका निश्चय कियाहै उसकी स्तुति लि
है विचार देखो यो कुछ विरोध की वात नहीं जव
भेदवादी वेदान्त की ऐसी ऐसी युक्तियों में दव जाते
उत्तर नहीं देसक्ते तव यो वकने लगते हैं। अजी ज्ञान
कठिन है। कलियुग में ज्ञान नहीं होता और जो ब्रह्म
ज्ञानी विशेष करके संन्यासी हैं उनकूं कहते हैं कि क
युग में संन्यासवर्जित है उनसे बूझना चाहिये श्रीमत्प
हंसपरिव्राजकाचार्य श्रीशंकराचार्य महाराज शिवजी

अवतार पद्मपादपरमेश्वराचार्य्य हस्तामलक आनन्द गिरिजीसे आदि लेकर वहुत ग्रन्थोंमें प्रसिद्ध हैं और वहुतसे इस समय में प्रत्यक्ष हैं और श्रीशंकराचार्य महाराजकूं भी कोई दोहजार वर्पवीते हैं जव कलियुग था वा नहीं और जो कलियुगमें शुचि ज्ञान नहीं होता तो व्यास जीने पुराणोंमें इतिहासोंमें भलेप्रकार सूत्रोंमें और श्रीकृष्णचन्द्र महाराज ने गीताशास्त्र में ज्ञान क्यों कहा और प्रथम अध्यायमें गीता भाष्यादि ग्रन्थों का नाम हम लिख आयेहैं वे ग्रन्थ उन्होंने क्यों वनाये और जो यो शंका करे कि हरि का नामहीं ३ मेरा जीवन है और अन्यथा कलियुग में नहीं है३गति और जो केवल वोधके लिये प्रयत्न करते हैं वे केवल तुप कूटते हैं ऐसे २ वाक्यों की क्या गति है। उत्तरः—ऐसे २ वाक्य कि कलियुग में ज्ञान नहीं होता ये वाक्य जो किसी जगह नाम माहात्म्य की प्रशंसा वा भक्तिकी प्रशंसा वा कर्मादि की प्रशंसा में व्यासादिने जो कहेहैं क्योंकि व्यासादि कवियोंका यो नियम है जिस देवता वा भक्ति आदिकी प्रशंसा करते हैं वहां योंहीं कहते हैं कि जोहैं यों हीं है तो वो कहना उनका मूर्खोंके लियेहै और जो योंनमाने तो ऊपर जो हमने प्रश्न कियेहैं कि, उन्हों ने ज्ञान क्यों कहा उसका उत्तरदो तात्पर्य प्रथमहीं हम तीसरे अध्यायमें लिख आये हैं कि मूर्ख वेदशास्त्रके एक २ देशकूं सुनकर वा अपने मतका हठ करके वृथा

वाद करते हैं बुद्धिमानको वेद शास्त्रोंका सिद्धान्त निश्च करना यो सिद्धान्त है कोई महात्मा यह कहते हैं हम आधे श्लोकमें वो बात कहेंगे जो कोटि ग्रन्थोंने क है सोई आधे श्लोक में कहते हैं ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या है जो यो सच्चिदानन्द लक्षणवाला जीवहै सोई ब्रह्म अपर कोई ब्रह्म नहीं योही ज्ञान मुक्तिका हेतुहै ॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिण्यांषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः ॥

श्रीशंकराचार्य महाराजने हस्तामलकाचार्य्यसे प्र किया कि तुम कौनहो इसका उत्तर श्री हस्तामलका र्य कहते हैं मैं मनुष्य, देव, यक्ष, ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शू द्र, ब्रह्मचारी, गृहस्थी वानप्रस्थ, संन्यासी इनमें कोई न निजबोध स्वरूपहूं फिर उन्होंने दृष्टान्त देदेकर करके जो औरोंकूंभी बोध होजावे इसी अर्थकूं नि किया हम भी उसी अर्थकूं संक्षेप करके इस अध्या लिखैंगे औरभी दृष्टान्त युक्ति लिखेंगे जैसे मनुष्यादि व्यवहारमें प्रवर्त्तहोना इसमें निमित्त सूर्य नारा ऐसे देह मन प्राण बुद्धि आदिकी प्रवृत्ति चेष्टा में जो मित्त है और परमार्थत्व रूप करके तो कोई उपाधि इश्यादि जिसमें नहीं केवल आकाशवत्पूर्ण एक

सो नित्य प्राप्त स्वरूप आत्माहै स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरों पंचकोशोंसे पृथक् अवस्थाका साक्षी सच्चिदानन्दरूप जो है सो आत्मा है। शंका ! जैसे और पदार्थ आकाश पृथिवीआदि इन्द्रिय मन बुद्धि आदि करके निश्चय किये जाते हैं ऐसे आत्मा तो नहीं जाना जाता। उत्तर। इन्द्रिय मन बुद्धिं आदिकूं आत्मा प्रकाशताहै जैसे दीप घटादिकूं बुद्धिआदि जड़ पदार्थोंकरके आत्माका कैसे निश्चय होसक्ता है आत्मातो स्वयंप्रकाश है आत्माकूं अपने जाननेमें इन्द्रिय मन बुद्धिं आदिकी इच्छा नहीं जैसे दीपकके जाननेमें और दीपकी इच्छा नहीं चिदाभासके अर्थ जाननेके लिये प्रथम दृष्टान्त लिखतेहैं महाकाश १ घटाकाश २ घटमेंजल ३ जलाकाश ४ ये चार दृष्टान्त हैं अब दृष्टान्त में समझो शुद्धचैतन्य १ कूटस्थ २ अन्तःकरण ३ जीव ४ इसीका नाम चिदाभास है अर्थात् चैतन्यवत् प्रतीत हो परन्तु चेतन्य के लक्षण करके रहित हो जीवका जो अधिष्ठान अर्थात् जीव जिसमें कल्पित है और कूटवत् निर्विकार ठहरारहे सो कूटस्थ जीवका लक्षण यों है अधिष्ठान जो चैतन्य और सूक्ष्म शरीर और चैतन्य की जो छाया सूक्ष्मशरीर में इन सब का संग जीव कहा जाताहै और महाकाश १ घटाकाश२ अभ्राकाश ३ जलाकाश ४ ये चार दृष्टान्त हैं अब दार्ष्टान्तिक में समझो शुद्धचैतन्य १कूटस्थ २ ईश्वर ३ जीव ४

और वोही चैतन्य ऐसे ६ प्रकार का है शुद्धचैतन्य १ सा
क्षी २ प्रमातृ ३ प्रमाण ४ प्रमेय ५ फल ६ उपाधिरहि
शुद्धचैतन्य १ अविद्योपहितसाक्षी २ अन्तष्करण विशि
प्रमातृ ३ अन्तःकरणवृत्त्यवच्छिन्न प्रमाण ४ घटावच्छि
चेतन्य प्रमेय ५ अन्तःकरणवृत्त्यभिव्यक्त चैतन्य सो फ
ल चैतन्य दृष्टान्त इसमें तालाव गूलकेदार का है यों वि
षय भाषा में भले प्रकार नहीं लिखा जाता जो विस्तार
करके लिखें भी तो इसका समझना कठिन है और
समझ सक्ताहै वो भाषा क्यों पढ़े सुन्दरशास्त्र पढ़ सुने प्र
त्यक्ष प्रमाण में और परमात्मा बुद्धि आदि का किस प्र
कार ते विषय है और किस प्रकार विषय नहीं इसवात
जानने में इस विषय का जानना अवश्य चाहता है
लिये यों विषय वेदान्त शास्त्रार्थ के जाननेवालों से श्र
करना योग्यहै जो इस ग्रन्थ कूं पढ़ावे सुनावेंगे वे अव
इस विषय कूं भी जानते होंगे हमने जो प्रसंस चिदाभ
के अर्थ जाननेके लिये लिख दिया है जैसे मुखका आभा
सक मुखका जनानेवाला जो दर्पण में दीखता है वो मुख
कुछ पृथक् वस्तु नहीं ऐसे बुद्धि में जो चिदाभास है
चैतन्य से पृथक् कुछ वस्तु नहीं उसका जो अधिष्ठान
टस्थ रूप सो नित्य प्राप्त आत्माहै जैसे दर्पण के अ
में आभासकी हानि हुये सन्ते एक मुख प्रतीत होता
वहां कुछभी कल्पना आभास्य आभासक द्रष्टा दृश्य

म्न प्रतिविम्वकी नहीं होती ऐसे ज्ञानके नाश हुये संते कार्य उसका बुद्धि है बुद्धिका नाश हुये सन्ते जो निराभासक त्रिपुटीरहित वस्तुहै सो आत्मा है ध्याता, ध्यान, धेय-प्रमाता, प्रमाण, प्रमेय--ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय, इसकूं त्रिपुटी कहतेहैं मन इंद्रिय आदिसे पृथक् मन इन्द्रिय आदिका आदि मन इंद्रिय आदि करके जो अगम्य सो आत्माहै सव जीवोंकी बुद्धि में जो एक चैतन्य अपने आप शुद्धरूप ऐसे भानहोताहै कि जैसे अनेक जलके घटों में एक सूर्य प्रतिविम्व करके भान होताहै सो आत्माहै ॐ जैसे एक सूर्य अनेक नेत्रोंकूं क्रम करके नहीं प्रकाशता ऐसेआत्मा ज्ञानस्वरूप अनेककूं क्रम करके नहीं वोध करता।शंका।जो एक चैतन्य सव शरीरों में है तो यज्ञदत्तादि के दुःख सुख देवदत्त क्यों नहीं अनुभव करता। उत्तर। अविद्याकी उपाधिसे जिस शरीर में जिस जगह विशेष अध्यास है वहींके दुःखादिं अनुभव होसक्ते हैं और जगहके नहीं होसक्ते जैसे जिसकूं योही निश्चय है कि इस शरीरमें चेतन्य और है यज्ञदत्तादि के शरीरोंमें और चैतन्य है तो उसकूंभी एक काल में शरीर फूटने का दुःख और पलँगपर सोने का सुख और भी अनेक दुःख सुख अनुभव नहीं हो सक्ते जिस कालमें जहां अन्तःकरण की वृत्ति होगी उसीजगहका दुःख सुख प्रतीत होगा और जगह का नहीं होगा जो दूसरे शरीर में अध्यास होगा तो संदेह यज्ञदत्तादि के दुःख सुख प्रतीत

होंगे जैसे मित्र पुत्रादि में अध्यास होताहै तो उनके दुःख
में जो कहताहै कि मैं दुःखी सुखीहूं और यो विचारना
हिये कि जो प्रथम शरीर में चैतन्य था वोही इस श
में है फिर पूर्वजन्मके दुःख सुख क्यों नहीं प्रतीत
तात्पर्य जब एक शरीर में यो व्यवस्था है जो अन्तः
णकी वृत्ति नेत्रके साथ लगीहुई है तो रूपही का ज्ञान
ताहै समीप बैठे कुछ कहाकरो किंचित् नहीं सुनत
प्रकार सब जगह कल्पना करलेनी हजारवस्तु घरमें
पहरने देखने की रक्खीहों जिस जगह अन्तःकरणकी
है वोही दुःख सुखकी हेतुहै जबकि एक शरीरके दुःख
एक समय होनेवाले उनका एक कालमें अनुभव
होसक्ता फिर अनेक शरीरों का कैसे दुःख
अनुभव होसके। शंका। अष्टावधानी तो उत्तर
चौसर खेलनी आदि ऐसे ऐसे ८ काम एक समय
करताहै और दूसरे जो एक बालिश्त चौड़ा लम्बा ख
है उसकूं दांतों से कुतर २ जो खाता है तो शब्द
रूपरस गन्ध उसकूं एक कालमें प्रतीत होताहै और
कोई कहता है कि मैं चन्द्र तारोंकूं एककाल में दे
हूं इसका उत्तर दो। उत्तर। मूर्ख यों बात कहता
एक कालमें सबकूं अनुभव करताहूं उसकूं मनकी
की खबर नहीं मन ऐसा चंचल है एक क्षण नहीं
पाता—प्रथमपदार्थ कूं अनुभवकरके दूसरे पदार्थ में

होजाता है इस बात कूं सूक्ष्म दर्शी जानते हैं और सुनो यो प्रसिद्ध है कि वाणी आदि इन्द्रिय विना अन्तःकरण विशिष्टचैतन्यकें युक्तहुये किसी क्रिया में प्रवर्त्तन नहीं होसक्ते देखिये पुरुष पाठ जप भी करता है और अनेक मनोराज्य भी करता है विचारना चाहिये उसके मुखसे श्लोक मंत्र जो उच्चारण होताहै तो चैतन्यविशिष्ट मनका वाणी के साथ संयोगहै वा नहीं जो कहो कि संयोग है तो मनोराज्य कौन करताहै और जो कहो संयोग नहीं तो वाणीजड़है उसमें क्रिया कैसे होतीहै तात्पर्य व सन्देह प्रतीत होताहै मनकी गति बहुत चंचल है मनमनोराज्य भी किये जाता है और वाणी के साथ मिलकर उस विषय कूं भी अनुभव किये जाता है मूर्ख योंहीं जानता है कि मेरा मन पाठजपमें नहीं लगा जिनकू अपने मनकी भी खबर नहीं उनसे ऐसी ऐसी शंका रहती हैं इसउत्तर में तीनों प्रश्नका उत्तर है ॥

श्री शंकराचार्य भगवान् कहतेहैं कि यो जो जगत दीखता है योक्याहै क्या इसका रूपहै यो कैसे हुआहै इसका क्या हेतुहै यो बुद्धिमान को कभी नहीं चिन्तवन करना फिर क्या चिन्तवन करना चाहिये यों माया भ्रांति इन्द्रजाल है यों चिन्तवन करना चाहिये जैसे किसीके पैर में कांटा लगजावे तो वो यो न विचारे कि मेरे यो कांटा कौनसे मुहूर्त में लगाहै कौनसे पेड़का है यहां कैसे आया

ऐसार्चिन्तवन न करै जैसे वने उसके निकालने का उ
करै ऐसेही संसारकी निवृत्तिका उपाय करे जैसे एक
का प्रतिविम्ब अनेक जलके घटों में है जो घटकूं ले
चले तो सूर्य नतो उसके साथ जाताहै न कँपता है
आत्मा ज्ञानस्वरूप शरीर इन्द्रियादि की क्रियामें वो
यावाला नहीं जैसे ढक गईहै वादल से दृष्टि जिसकी
यों मानता है किसूर्य छिप गये ऐसे अविद्याकी उपाधि
योंपुरुष आपकूं वृथा वँधाहुआ मानता है और जैसे
वन्दर ने घटमें हाथ डालकर दोनों हाथ में अन्न भ
मूठी वन्द करली पीछे वृथा अज्ञान से चीची किल कि
करे है विचारो उसकूंकिसने वन्धन कियाहै और सुनो
ई तोते के पकड़ने के लिये मैदान में तो चुगा डाले
है और द्रो बांस खड़े करके वीच में उसके नलकी
पंखे में होती लगा देताहै नीचे उस नलकी के किसी
में जलभर देताहै तोता चुगे के लालच आताहै
नलकी पर आनकर वैठता है उस नलकी का नियम
उसके ऊपर जानवर वैठा और वो फिरी और जानवर
लटा हुआ जो वो जानवर छोड़कर भाग जावे तो
है नहीं तो यों हाल होताहै कि जब तोता उस नलकी
आनकर वैठा और वो फिरी तोतेने जाना यों मेरा
था जो इसको छोडदिया तो जाने कहां गिरूंगा उस
पकड़े रहा फिर उस तोते की नीचे कूं पीठ ऊपर

होगये उस तोते ने जो जलकी तरफ कूं देखा तो अपना प्रतिविम्ब जलमें प्रतीत हुआ उस तोते का अध्यासन प्रतिविम्ब में लगगया फिर वो तोता यो जानता है कि मैं डूब रहा हूं जल में ऊपर का सबहाल भूलगया वृथा अज्ञान से चीचीं टीटीकरै है विचारो उसकूं किसने बंधनकिया है ऐसे यो कूटस्थ चैतन्यरूप अपने प्रतिविम्ब चिदाभास से अध्यास करके बंधनवत् होरहाहै वास्तव बंधनहीं सबजगंह जैसे आकाश अनुस्यूतहै ऐसे आत्मा वाहर भीतर स्वच्छरूप अनुस्यूत है किसी वस्तुकूं स्पर्श नहीं करता और जैसे श्वेत माणि रंगकी सन्निधि होने से लाल पीली प्रतीत होतीहै ऐसे आत्मा अविद्या की उपाधि से करता भोक्ता प्रतीत होता है। समस्त स्थूल सूक्ष्म उपाधि कूं नेतिनेति इस वाक्य से निषेध करके जैसे दूसरे अध्याय में जीव ब्रह्मकी एकता महावाक्य करके करीहै सदा वोही चिन्तवन करना चाहिये प्रथमतत्व पदों का अर्थ लिख भी आयेहैं फिरभी और प्रकार करके सुनो कोई मुक्तिकी इच्छावाला तीनताप जो संसारमें हैं उन करके तपा हुआ और ॥

टी०। ज्वर क्रोधादि करके जो ताप सो आध्यात्मिक १ शत्रु चोर व्याघ्रादि करके जो ताप सो आधिभौतिक२ शीतोष्ण पवनादि करके जो ताप सो आधिदेव ॥ ३ ॥

मू०। संसार से उद्विग्न हुआ है मन जिसका शम दमा-

दि साधनों करके युक्त सद्गुरु से बूझताहै हे भगवन्
साधन करकेअनायासपूर्वक संसाररूप बन्धनसे मैं छूट
सो महाराज मुझकूं संक्षेप करके केवल कृपा करके
उत्तरः-हे साधो तुमने वहुत अच्छा बूझा सावधानमति
सुनो, तत्त्वमसि महावाक्यादिसे उत्पन्न हुआ जो जीव
का तादात्म्यविषय ज्ञान सो मुक्ति का कारण है।
महाराज कौन जीव कौन ब्रह्म है किस प्रकार करके
की तादात्म्यताहै और महावाक्य किस प्रकार करके
सको प्रतिपादन करते हैं?उत्तर। जीव कौन है तूही
वहै और जो बूझताहै कि मैं कौन हूं तूहीं वेसन्देह ब्रह्म
प्रश्न। हे भगवन् अवतक तो मैंने भलेप्रकार पदार्थ
नहीं जाना मैं ब्रह्महूं यो जो महावाक्यार्थ इसकूं कैसे
हूं। उत्तर। सत्य कहते हो वाक्यार्थके ज्ञान में
पदार्थ का ज्ञान हेतु है इसलिये प्रथम तत्त्वम् पदका
सुनो अन्तःकरण और उसकी वृत्तियों का जो साक्षी
घन नित्य एकरस और देहादिमें जो अहंबुद्धि
त्यागकरके आत्मारूप करके जो चिन्तवन करनेमें
है सो आत्मा त्वम् पदका अर्थ।यो शरीररूपादिवाला
ने से आत्मा नहीं जैसे पञ्चमहाभूतों के विकार
ऐसेही प्रत्यक्ष विकारवाला होने से देह भी है। प्रश्न
देह अनात्मा है तो हे भगवन् आत्माकूं करामल
साक्षात् प्रतिपादन करो। उत्तर। जैसे घटका देखने

घटसे पृथक् होता ऐसे देहका देखने वाला देह कैसे होगा और जैसे मकान में बैठा हुआ कोई यो कहैं मैं मकान हूं तो विचारो कैसी मूर्खता की बात है ऐसे यो चैतन्यरूप असंग निरवयव है और कहै कि मैं देह हूं अर्थात् पुरुष स्त्री ब्राह्मणादि हूं विचारो इससे परे और क्या अज्ञान होगा देहं तो उपलक्षण है प्राण इन्द्रिय मन बुद्धि आदि दृश्य होने से सब अनात्मा है सबका द्रष्टा सो आत्मा है देहसे परे इन्द्रिय इन्द्रियों से परे मन मनसे परे बुद्धि बुद्धि से परे जो बुद्धि का साक्षी सो आत्मा आत्मा से किंचित् नहीं और सब संघात् भी आत्मा नहीं होसक्ता क्योंकि दृष्टा द्रश्य विलक्षण होते हैं देह इन्द्रिय की जो चेष्टा क्रिया में सदा उपचय अपचय वाली हैं कभी किसी प्रकार का शरीर कभी किसी प्रकार की इन्द्रिय मनादि की चेष्टा देखने में आतीहै कभी किसी प्रकार की जिस की संनिधिमात्र से ये सब चेष्टा करते हैं एकरस जो इनका द्रष्टासो आत्मा है जड़ पदार्थ देहादि जिसकी संनिधि से चैतन्यवत् प्रतीत होते हैं जैसे चुम्बक की संनिधिसे लोहा सो आत्मा है मेरा मन इस समय कहीं गया अब मैंने स्थिर किया इस वृत्ति कूं जो जानताहै सो आत्मा है जाग्रत् स्वप्न सुषुप्तिकाहोना न होना इसकूं निर्विकार हुआ जो जानता है सो आत्मा है जैसे घटका आभासक दीप घटसे पृथक् है ऐसे देहादिका आभासक देही पृथक् है देह स्त्री

पुत्र मकानादिके नष्ट होते २ तो आपकूं परमप्रेमका
स्पद प्रतीत होता है सोई आत्मा है जैसे सूर्य पापु
का साक्षी असंग सविकार है इसी प्रकार साक्षी चैतन्य
निराकार आत्मा है और ये ६ विकार देहकेहैं
आस्ति वर्द्धते विपरिणमते अपक्षीयते विनश्यति देह
य प्राण मन बुद्धि अज्ञान का लक्षी त्वम् पदका वा
है।अव तत्पद का अर्थ लिखते हैं:-परिपूर्ण एकरस
नन्द ज्ञानस्वरूप परमात्मा सर्वज्ञ परमेश्वर संपूर्ण
वाला जिसकूं वेद ऐसा प्रतिपादन करतेहैं सो पर
ब्रह्महै जो प्रपंचका कारण अन्तर्यामी कर्मों के फल
नेवाला जगत्की सृष्टि स्थिति लय जिसके सका
होते हैं सोई तत्पद का वाच्यार्थ है और एक शुद्ध
तत्त्वम् पदों का लक्ष्यार्थ है।तत्त्वम् पदों की एकता
अध्याय में जैसे लिख आयेहैं वो प्रकार यहां चिंतव
लेना। तात्पर्य जो तत्पद का लक्ष्यार्थ है सोई त्वम्
लक्ष्यार्थहै सो तू है ऐसा कहो वा तू सो है ऐसा कहो
प्रकार गुरूने शिष्यकूं वोधन किया और कहा कि
योवाक्यार्थ जतवक भलेप्रकार दृढ़ न हो तव तक
दमादि साधनोंकरके युक्त हुआ श्रवण मनन नि
सनका अभ्यास नित्य प्रतिदिन करता रहे श्रवण
सुना जाताहै जिससमय कोई ऐसा रागगाता है मृग
में जो तृण होता है सोवाहरका वाहर और भीतर

तर रहजाता है दृष्टान्त में आप समझ लेना दश उपनिषद् वृहदारण्यादि भाष्यसहित शारीरकभाष्य गीताभाष्य ये तीन प्रस्थान वेदान्तके कहलातेहैं उनकूंही ब्रह्मविद्या कहतेहैं आदित्यपुराण पंचदशी आदि ग्रन्थोंका उन्हींमें अन्तर्भाव है ऐसे ऐसे ग्रन्थोंका ब्रह्मनिष्ठोंसे श्रवण करना जबतक संशय विपर्यय भलेप्रकार न जावे तबतक बारम्बार आदिसे अन्ततक इन ग्रन्थों का श्रवण करना इसीका नाम श्रवणहै मनन ऐसे करना जैसे पटवा रेशमकूं सुलझताहै ऐसेही जो श्रवण किया उस कूं एकान्तमें बैठकर चिन्तवनकरे पूर्व पक्ष साधन फलादि कूं पृथक् करे युक्ति से सिद्धांत वस्तु को पुष्टकरे इसीका नाम मननहै निदिध्यासन ऐसे करना जैसे कोई बाजार में बैठा हुआ अपना काम कर रहा था राजा की सवारी आगे कूं चलीगई कुछ न मालूम हुआ ऐसे जो मनन करके सिद्धान्त वस्तुका निश्चय किया है कि मैं देह प्राण इन्द्रिय मन बुद्धि अज्ञान का साक्षी कूटस्थ हूं इसका सदा चिन्तवन करना इसकूं तो सजातीय प्रवाह कहते हैं और जैसे प्रथम देहमें अध्यासनथा किमैं ब्राह्मणादि हूं इस का सदा चिंतवन न करना इसकूं विजातीय तिरस्कार कहते हैं इस प्रकार सजातीय प्रवाह और विजातीय तिरस्कार सदा करते रहना इसी कूं निदिध्यासन कहतेहैं श्रवण से अज्ञान का नाश होताहै मनन करनेसे संशय का नाश होताहै निदिध्यासन करनेसे विपर्ययका नाश होताहै फिर

महावाक्यार्थ का ज्ञान भलेप्रकार दृढ़ होजाताहै सोई मु
क्तिका हेतुहै ॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिण्यांसप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

अथाष्टमोऽध्यायः॥

नित्य यह विचार करता रहै कि यो शरीर इन्द्रि
दि अविद्या का कार्य है बुद्बुदवत् नाशवान् है मैं तो
से विलक्षण एकरस हूं मैं देह नहीं इसहेतु से मेरे जन्मा
नहीं मैं इन्द्रिय नहीं इस हेतु से शब्दादि विषयों का
मेरा संग नहीं मैं मन नहीं इस हेतुसे दुःख सुखादि
धर्म नहीं मैं प्राण नहीं इस हेतुसे भूंख प्यास मेरे धर्म नहीं
निर्गुणतो निष्क्रिय नित्य निर्विकल्प निरंजन निरा
निर्विकार नित्यमुक्त निर्मल आकाशवत् सारे व्याप
बाहर भीतर वेसंग अचल नित्यशुद्ध नित्यबुद्ध अख
आनंद अद्वय अक्षर अजर अमर हूं श्रीशंकरा
भगवान् कहते हैं इस प्रकार जो अभ्यास निरन्तर क
रहै कि मैं इसप्रकार ब्रह्महूं तो यो अभ्यास अविद्या
के सहित हरलेता है जैसे रोगकूं औषध अभ्यास करने
साधन लिखते हैं ये साधन गीताशास्त्र में लिखे हैं शुद्ध
करके युक्त सत्त्वगुणी धैर्यसे उसी बुद्धि कूं निश्चय क
शब्दादि विषयों कूं त्याग करके राग द्वेष कूं दूर करके
विक्त देशमें बैठकर सदा इसप्रकार भोजनका अभ्

करना योगशास्त्र में लिखा है दो भाग तो अन्न करके पूर्ण करे और एक जल करके और एक भाग पवन के प्रचार के लिये खाली रक्खे देह वाणी मनकूं निग्रह करे अर्थात् अपनी इच्छापूर्वक अपनेर विषयमें प्रवर्त न हो ध्यान योग जो निदिध्यासन इसीकूं मुख्य समझकर नित्य प्रतिदिन इस ध्यानयोग का अभ्यास करते रहना वैराग्य कूं आश्रय रखना अहंकार न करना कि मैं ऐसा विरक्तहूं काम क्रोध दुराग्रह कूं त्याग करके प्रारब्ध के बलसे जो प्राप्त होजावे उसी में सन्तोष करना जो पदार्थ पराई इच्छासे आजावे उनमें ममता छोड़कर सदा निदिध्यासन करना योगके बलसे खोटे मार्गमें प्रवृत्त न होना अर्थात् किसीकूं शाप देना किसीपर अनुग्रह करना यो न करना परमेश्वर कहते हैं इस प्रकार अभ्यास करनेवाला जो मेरा वास्तव तत्त्वस्वरूप है उसकूं प्राप्त होजाता है समस्त दृश्यकूं आत्मामें लयकरके जैसे प्रथम अपवाद लिख आये हैं एक आत्माकूं निर्मल आकाशवत् भावना करता रहै रूप वर्णादिकूं त्याग करके परमार्थ का जाननेवाला परिपूर्ण चिदानन्दरूपकरके स्थित रहै इस प्रकार अभ्यास करते करते वृत्तिज्ञान उदय होकर अन्तःकरण के सहित समस्त अज्ञान कूं भस्मकर देता है जैसे मथन करते करते बांसमें अग्नि उत्पन्न होकर समस्त वनकूं भस्म कर देती है जैसे सूर्यके निकलनेसे प्रथम चांदना होजाता है ऐसे प्रथम मूलाज्ञान का

नाश होता है फिर थोड़े दिनोंके पीछे सब कार्य उसके स्थूल देहसे लगाकर अविद्या पर्यन्त नष्ट होजाते हैं आत्मा तो सदा प्राप्त है अविद्या करके अप्राप्तवत् प्रतीत होता है जैसे अपने गलेकी माल भूल जावे फिर किसीके वतलाने से प्राप्तवत् प्रतीत होंती है जैसे स्थाणु में पुरुष शुक्ति में रजत रज्जु में सर्प की भ्रान्ति ऐसे २ वहुत दृष्टान्तहैं इसी प्रकार ब्रह्मके विषय जीवता है जैसे दिक्भ्रम सूर्य के उदय होनेसे दूरहोता है ऐसे यो वर्ण आश्रमादि की भ्रान्ति अविद्या के नष्ट होने से आत्मा के आविर्भाव होनेसे दूर होतीहै जैसें कारण से कार्य भिन्न नहीं ऐसे जगत ब्रह्मसे भिन्न नहीं कोई कीट भ्रमर का ध्यान करते करते भ्रमर होजाता है ऐसे जो जीव सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म सच्चिदानन्द ब्रह्मका ध्यान करते करते ब्रह्म होजावे तो इसमें क्या कहना है जैसे किसी घटमें १० छिद्रहों भीतर उसके दीप होवे उसी दीपकी प्रभा दश तरफ कूं निकलकर परिच्छिन्न प्रतीत होतीहै ऐसे आत्मा दीपवत् शरीर घटवत् इन्द्रिय छिद्रवत् हैं जैसे उस दीपकूं छिद्र द्वारा पवन लग २ प्रभा उसकी मन्द रहतीहै ऐसे इन्द्रिय द्वारा विषय वासना रूपी पवन लगलग आत्मा का सच्चिदानन्द रूप मन्दसा प्रतीतहोता है इद्रियोंके रोकनेसे आत्मा सच्चिदनान्द साक्षात् प्रतीत होता है यावत् प्रारब्ध कर्म पहैं तावत् विद्वान् उपाधि में स्थित हुआ प्रतीत होता

परन्तु आकाशवत् लिपायमान नहीं होता ज्ञानवान प-ण्डित भी हैं परंतु मूर्खवत् जानकर रहताहै किसी जगह वायुवत् आसक्त नहीं होता जब अविद्या का नाश होजाता है तब निर्विशेष ब्रह्म में लय होजाता है इस लाभसे परे कोई और लाभ ब्रह्मलोकादिक नहीं इस सुखसे परे और कोई सुख चक्रवर्त्ती राजा इन्द्र ब्रह्मादि का नहीं इस ज्ञानसे परे कोई और ज्ञान भूत भविष्यत् आदिका नहीं इस प्रत्यंय कूं रूप आत्मा कूं देखकर मूर्त्तिमान् परमेश्वरके देखने की इच्छा नहीं रहता यो रूप होकर फिर मनुष्य देवतादि रूप नहीं होता यो जो आनंद रूपहै इस आनंदके एक लेशमें ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यन्त आनन्दीहै जिसकी आभा करके सूर्य चन्द्रादि भासते हैं सूर्य चन्द्रादि की आभा करके जो नहीं प्रतीत होता सोई प्रत्यंगात्मा ब्रह्महै यो रूप ज्ञानचक्षु करके दीखता है कर्मचक्षु करके नहीं दीखता जैसे अंधेकूं सूर्य उआ हुआ नहीं प्रतीत होता तात्पर्य यो रूप अधिकारीकूं प्रतीत होता है जैसे स्त्रीसंग का आनंद तरुण अवस्था में आठ दश वर्षकी अवस्था में लड़का लड़की जो उस आनंदकूं अनुभव कियाचाहे तो क्या होसक्ता है जिनके मैले अन्तष्करण हैं उनकूं इस रूपका साक्षात् नहीं हो सक्ता अन्तःकरण मैले होने से देवता गुरु वेदान्त शास्त्र में श्रद्धा का अभाव होता है श्रद्धाके विना गुरुकृपा नहीं करते गुरु की

कृपा के विना कभी किसीकाल में ज्ञानहुआहै न होगा श्री शंकराचार्य भगवान् कहते हैं कि हज़ारों श्रुति अद्वैत ब्रह्म कूं प्रतिपादन करती हैं और यो आत्मा सच्चिदानन्द रूप भले प्रकार निरन्तर प्रकाश वालीभी है परन्तु विना गुरुकी कृपा मैले अन्तःकरणवाले साक्षात् करने कूं समर्थ नहीं इसलिये चाहिये प्रथम अन्तष्करण की शुद्धिका उपाय करे क्योंकि श्रीभगवान् ने भी प्रथम अर्जुनकूं ज्ञान उपदेश किया फिर कहा हे अर्जुन हमने तुमकूं ज्ञान उपदेश किया जो तुमकूं यो ज्ञान अपरोक्ष न हुआहो तो अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये निष्काम कर्मयोग सुनो जैसे सोना मैला होताहै उसकूं अग्निमें तायकर शुद्ध करलेते हैं ऐसे अन्तःकरणकूं निष्काम कर्म योग करके शुद्ध करना चाहिये ज्ञान की इच्छावालेकूं प्रथम निष्काम कर्म मुख्य है शुद्धान्तःकरण वालेकूं समाधिसाधन मुख्यहै प्रश्न– शुद्धान्तःकरणवालेकी क्या परीक्षा है। उत्तर– जब जानें यहांके जो देखे सुने स्त्री आदि पदार्थ हैं स्वर्गादिके अमृतादि पदार्थ जो सुनेहैं सबकूं चित्त न चाहै दुःखदायी जाने मुक्तिकी इच्छाहो तब निश्चय करे कि अन्तःकरण शुद्ध होगया फिर विवेक वैराग्यादि साधनों करके युक्त होकर यो विचार करे मैं कौनहूं यो जगत् कैसे हुआहै इसका कर्ता कौनहै उपादान क्या है इसीका नाम विचार है यो देहपंचभूतोंका विकार मैं नहीं इन्द्रिय मन

बुद्धि आदि मैं नहीं उनसे कोई विलक्षणहूं और जो कि-सीने प्रथम न्यायशास्त्र पूर्व मीमांसा वा पुराणादि पढ़े सु-नेहो वेदांत न शास्त्र सुनाहो इस हेतुसे उसके बहुत संशय विपर्य्यय हों तो शारीरक भाष्य पढ़ें सुने वहां भले प्र-कार युक्ति पूर्वक निश्चय हो सक्ताहै भारत भागवतादिमें तो जिस जगह जो ज्ञान का प्रसंग है तवतो योही प्रतीत होताहै कि ज्ञान मुख्य है और जिस जगह कर्म उपा-सनादिका प्रसंगहै वहां कर्मआदि मुख्य प्रतीत होतेहैं वै-ष्णवादि अपने २ मतकूं मुख्य वताते हैं औरोंकी असू-या करतेहैं. भागवतादिमें स्पष्ट यो नहीं प्रतीत होता कि स-मस्त वेद भारत पुराणादिका कहां समन्वय है अर्थात् मुख्य प्रयोजन किसमेंहै शारीरक भाष्यमें भले प्रकार श्रुति स्मृति युक्ति दृष्टांत देदेकर और अनेक दोष भेद-वादि आदियोंके मतोंमें दिखाकर और जिसलिये कर्म उ-पासनादिका वेदोंमें प्रसंगहै उतने अंशकूं अंगीकार करके यो सिद्ध कियाहै कि समस्त वेद शास्त्र पुराणादिका ब्रह्म-में समन्वय है सव श्रुति स्मृति प्रवृत्ति निवृत्ति मार्गकी कोई साक्षात् कोई परम्परा करके ब्रह्मकूं वोधन करतीहै और जो यो विरुद्ध प्रतीत होता है कि कोई श्रुति कहती है ब्रह्म मनका विषय नहीं कोई कहती है ब्रह्म सूक्ष्म मन बुद्धि करके जानाजाताहै कहीं ऐसा सुना जाता है जब वैराग्य होवे उसी समय संन्यास करे कहीं ऐसा सुनाजाताहै

माता पिता स्त्री आदिके त्यागमें दोषहै ऐसे २ विरु
वाक्य अनेकहैं विचारनेसे विरुद्धवास्तव नहीं क्योंकि जै
सा अधिकारी देखा वैसाही उपदेश किया तात्पर्य्य सब
का अविरुद्ध भले प्रकार शारीरक भाष्यमें निश्चय हो स
क्ताहै और मुक्तिके साधन ऐसे ऐसे सुने जाते हैं कि अन
मुक्तिका साधन है और तीर्थ श्रीगङ्गाजी से लेकर यावत
हैं उनमें स्नान करना बद्रीनारायणजीसे आदि लेकर
दर्शन पाषाणादि मूर्तियोंका पूजन करना पाठ जप क
रना चतुर्भुजी आदिमूर्तियोंका ध्यान करना सगुण निर्गु
ण ब्रह्मकी उपासनासे लगाकर वेदान्त शास्त्रका श्रवण
मनन निदिध्यासन तक योहीं सुना जाताहै ये सब मुक्ति
के साधनहैं अर्थात् एक एकादशी के व्रत करनेसे मुक्तहो
जाता है विष्णु चरणोदक पान करनेसे श्री गङ्गाजी में
स्नान करने से मुक्त हो जाताहै तात्पर्य्य सबके माहात्म्य
में योंही प्रतीत होता है कि यें सब मुक्तिके साधन हैं अ
यो विचारना चाहिये मुख्य साधन कौनहै जिससे निश्च
मुक्ति हो जावे और जो किसीके यो विश्वास है कि एका
शी आदि व्रत करनेसे बद्रीनारायणादिके दर्शन करनेसे श्री
गङ्गाजी में स्नान करने से निश्चय मुक्त होजाताहै फिर त
क्यों नहींहोती तात्पर्य्य मुख्य साधन मुक्तिका वेदान्त शा
का श्रवण मनन निदिध्यासनहै और सब परम्परा कर
गौण है इस बात कूं भी प्रमाणपूर्वक शारीरक भाष्य

सिद्ध किया है और जोकि पूर्व मीमांसावाले स्वर्गादि की प्राप्ति कूं मुक्ति कहतेहैं और कोई एक देशी उनके कहते हैं कि नित्य सुखका प्रकट रहना मुक्ति है सांख्यशास्त्र वाले कहते हैं देह बुद्धि आदि में अहङ्कारकी निवृत्ति हुये सन्ते औदासीन्य रहना मुक्तिहै पुराणवाले सालोक्य सामीप्य सारूप्य सायुज्यकूं मुक्तिकहतेहैं चारुवाक्य कहते हैं किसीके आधीन न होना मुक्तिहै न्यायशास्त्रवाले कहते हैं २१ दुःखोंका अत्यन्त नाश होजाना मुक्तिहै २१ दुःख न्याय शास्त्रमें प्रसिद्ध हैं अत्यन्त नाश अत्यन्ताभाव कूं कहते हैं अभाव चार प्रकार का है प्रागभाव जो घटसे प्रथम घटका अभाव प्रध्वंसाभाव जो घटके नाश होजाने में घटका अभाव अन्योन्या भाव जैसे घटमें घटका अभाव अत्यन्ताभाव जैसे शशे के सींग का अभाव और अनेक ब्रह्मलोक गोलोकादि की प्राप्तिकूं मुक्ति कहते हैं गरुड़वाले जो कहते हैं सो तो लोकमें बहुत प्रसिद्ध है और भी अनेकमतहैं अब विचारना चाहिये मुक्तिका क्या अर्थहै इसका भी निश्चय शारीरक भाष्यमें कियाहै कि अविद्योपहित जीव नामा शुद्ध चैतन्य का प्रतिविम्ब मिथ्याभ्रांतिसे आपकूं जीव मानताहै अविद्याकी उपाधिसे समस्त संसार मुक्ति पर्य्यन्त कल्प रक्खाहै ब्रह्मज्ञानसे अविद्याका नाश हुये सन्ते जीव रूप भ्रांति का दूर होना यो मुक्तिहै सर्व अनर्थो-

की निवृत्ति परमानन्दकी प्राप्ति इसी मुक्तिका लक्षण है
जैसे किसी घट गत जल में जो प्रतिविम्ब सो जलके
होनेसे नाश होजाता है फिर यो नहीं कहाजाता कि
प्रतिविम्ब कहांगया और प्रतिविम्बके नाशहोने और
होने में सूर्य कुछ और प्रकारके नहीं होजाते दृष्टांत
समझो कि शुद्ध चैतन्य जैसे प्रथमथा वैसेही पीछे
जैसे स्वप्नके खुलते हुये स्वप्नमें जो पदार्थ कल्प
थे सव उसीसमय नाश होजाते हैं ऐसे पीछे विदेह मु
के समस्त संसार नाश होजाताहै कोई ऐसा न वि
करै मैं तो मुक्त होजाऊंगा मेरे शत्रु मित्रादि और
वना रहेगा उनके पीछेके लिये यत्न करना मूर्खता
स्वप्नके दृष्टांतकूं भले प्रकार विचारना चाहिये वेद
शास्त्रवालों का जो कहना है वो तो अनुभवमें भी
ताहै श्रुति स्मृति आदिप्रमाण करके सिद्ध होस
और किसी शास्त्र पुराणादिका मत अनुभव में नहीं
ता वेदों से विरुद्ध स्पष्ट प्रतीत होता है विचारो जैसे
वका देहपात हुआ वा यमपुरीकूं वा स्वर्गकूं वा पितृ
वैकुंठादिकूं गया वा उसका जन्म उसीसमय इस
होगया वा गरुड़ वाले जो कहते हैं या उसी की व्य
(ॐ) हुई और जो बात कैसे अनुभवमें आवे कि सारी
में तो मूर्खताके काम करे अन्तकाल में काश्यादि
रनेसे नियम करके मुक्तहोजाता है जो ऐसे वाक्य

करतेहैं तो मुक्तिके लिये ज्ञानादिमें क्यों माथा मारते हैं. कहां तक लिखें हजारों ऐसी व्यवस्था हैं सब मतवाले अपने २ मतकूं युक्ति दे देकर सिद्ध करतेहैं परन्तु समस्त व्यवस्था कोई भले प्रकार नहीं कहते क्योंकि कोई स्वर्गकूं नित्य कोई अनित्य कहते हैं कोई। काश्यां मरणान्मुक्तिः। इसश्रुतिका अर्थ औरही प्रकार कहते हैं और यों भी भले प्रकार नहीं प्रतीत होता कि स्वर्ग वैकुंठ कैलाश ब्रह्मलोक गौलोकादिका कैसे भेदहै जैसे कि सांतलोक भूर्भुवादिहैं उनमेंहीं उनका अन्तर्भाव है वा कुछ और प्रकार है अथवा जिसकूं ब्रह्मलोक कहते हैं उसीकूं वैकुण्ठ पितृलोकादि कहते हैं जैसे यो स्थितिकी व्यवस्था है इससे सिवाय सृष्टिकी व्यवस्थाहै क्योंकि जब प्रत्यक्ष की व्यवस्था नहीं बैठ सक्ती परोक्ष की कौन बैठा सके यद्यपि यो व्यवस्था न कहीं लिखीहो परन्तु मेरे श्रवण करनेमें नहीं आई जो किसीने सुनीहो प्रमाणपूर्वक अनुभवमें आवे तो हमकूंभी योहीं इष्टहै कि जैसे नें संशय दूरकरदेना चाहिये यथामति मैं कहताहूं किसी पक्षमें मेरी हठनहीं यो जो व्यवस्था तो मुझकूं शास्त्रमें प्रतीत होतीहै और लोकमें यमनादिवहिश्तादि कहतेहैं और इस वातमें तो किंचित्भी संदेह नहीं कि परमेश्वर सबका एकहै और योभी निश्चय होताहै यमनादि भी नरक स्वर्गादिके अधिकारीहैं यो नियम

नहीं कि सबनरकहीकूं जावें क्योंकि श्रीभगवान् क
तेहैं सत्वगुणी ऊपरके लोकोंकूं प्राप्तहोवेगा शम द
संतोष दया कोमलता क्षमा दानादि सत्वगुण की वृत्ति
उनमें दीखतीहै इस हेतुसे निश्चय होताहै सत्वगुणके
तारतम्यतासे स्वर्गादिके अधिकारीहैं तात्पर्य्य इन सब
मतोंसे मेरी जानमें अविरोध व्यवस्था नहीं बैठसक्ती पर
वेदान्तशास्त्र के मतसे बैठसक्तीहै सो सुनो वेदान्त शास्त्र
वाले ऐसा कहतेहैं कियो जगत् अज्ञान करके कल्प रक्
है स्वप्नवत् मिथ्याहै जैसे स्वप्नमें एक स्त्रीके साथ एक
मय १० पुरुष संगकरें दशोंका सच्चाहै विचारनेसे झूंठ
तदुक्तम् ॥ चौपाई ॥ देखिय सुनिय गुणिय मनमाहीं
मोह मूल परममारथ नाहीं ॥ अर्थात् जगत्का कारण
अज्ञानहीहै परमार्थमें नहीं जैसे एकरज्जु पडीहै
उसकूं सर्प कोई मूत्रधारा कोई दण्ड कहतेहैं सब
कहना भ्रान्तिकाल में सच्चा परमार्थ में झूंठाहै ऐसे भ्रा
कालमें एक ब्रह्ममें कल्पित स्वर्ग वैकुण्ठादि सब
परमार्थसे झूठेहैं इस बातकी सिद्धिमें बहुत श्रुति स्
युक्ति दृष्टान्त इतिहासादि प्रमाण हैं वासिष्ठादि ग्रन्
अनेक इतिहास हैं वशिष्ठजी ने श्रीरामचन्द्रजीकूं अनेक
इतिहास सुनाकर इसी बातकूं सिद्धकिया है कई पुरु
तप करके यो वरमांगा कि हम सब इसी कालमें
होजावें वे सब ब्रह्मा होगये और ये ब्रह्माजीभी बनेरहे

उनके ब्रह्माण्ड सबके पृथक् २ हुये और एकऋषिने तप-
करके परमेश्वरसे बरमांगा हे परमेश्वर आपकी मायादेखूं
परमेश्वरने कहा जो दृश्य पदार्थहैं सब माया है ऋषिकूं
यों निश्चय रहा कि माया शब्दकरके कोई और पदार्थहै
फिर परमेश्वर से प्रार्थना करी कि महाराज नहीं घटनेके
योग्य यो पदार्थ उसके घटानेमें जो चतुर वो माया देखा
चाहता हूं महाराजने बरदेदिया कि देखोगे एक दिन
वे ऋषि हृषीकेश स्थानमें गंगाजीमें स्नान करतेथे गंगा
जीके तीर आसन पूजादि रखदिये ऋषिने जलमें जो
डुबकी मारी सो वे ऋषि अपना ऋषिपना तो भूलगये
किसी धीवरकी लड़की होगये काल पाकर उसलड़कीका
विवाह होगया ४० वर्षकी अवस्थामें कई लड़के व लड़की
उसके उत्पन्नहुये और अपनेपति के संगमें जो आनन्द
और संग करके दुःख और संसारके अनेक ताप और
बालकों के खिलाने देखनेमें जो आनन्द और मल मूत्र
धोनेमें जो दुःख सबकूं वे ऋषि स्त्री होकर अनुभव करते
भये एकदिन वो स्त्री उसी जगह जहां ऋषिने डुबकी
मारीथी जल भरनेके लिये गई घट कूं गंगाजी के तीरे
रखकर गंगाजी में स्नान करने लगी जब नीचे कूं डुबकी
मारी जबतो वो स्त्री थी जब ऊपरको मुख उघाड़ा तब
अपने शरीरकूं देखे तो ऋषिका शरीर होगया और गंगा-
जीके तीरे घटभीरक्खा दीखता है आसन पूजाभी रक्खी

हुई दीखती है यो भी स्मरण होताहै मैं असुक ऋषि हूं नित्य यहां स्नान करनेके लिये आता हूं और योभी स्मरण होताहै मैं असुक पुरुषकी स्त्रीहूं यहां जल भरने के लिये आई थी पहले घरकाभी व्यवहार स्मरण होताहै पिछले घरका भी व्यवहार स्मरण होताहै दोनों घरों प्रीतिहै स्पष्ट यो निश्चय नहीं होसक्ता है कि मैं ऋषि वा स्त्रीहूं उसकाल में उस स्त्री का पति अपने लड़के कूं गोद लिये हुये उसी जगह आया ऋषिने देखा कि निश्चय योही मेरा पतिहै फिर भलेप्रकार निश्चय होगया कि मैं गंगाजी में स्नान करनेसे ऋषि होगया उस पुरुष ने ऋषि से बूझा महाराज मेरी स्त्री यहां जल भरने आईथी उसका यो रक्खाहै वो कहां गई आपने भी उसकूं खीहै जो उसका वाक्य सुनकर और बालक लड़केकूं खकर मोह होगया ऋषि रोने लगा उस पुरुष ने प्रार्थना करके बूझा महाराज वो स्त्री गंगाजीमें डूबगई वा किसी सिंहादिने खालिया और तुम क्यों रोतेहो ऋषि कहते वो स्त्री तो मैं हूं गंगाजी में स्नान करने से ऋषि होगया बातकी सिद्धिके लिये समस्त व्यवस्था पिछले घरकी और लड़के लड़कियोंके नामादि कहदिये उस पुरुष निश्चय होगया कि वेसंदेह यों मेरी स्त्री है ऋषि उस पुरुष से कहते हैं इस लड़के कूं भले प्रकार पालना योंक वो करना उसने कहा कि तुम घरको चलो जो हुआ

हुआ बालकों कूं खिलाते रहना और घरके काम करते रहना ऋषिजी उसके साथ हुये उसी समय वो परमेश्वर की माया दूर होगई यो व्यवस्था कोई एक पलमें वीती जितनी देर जल में डुबकी मारी जब ऋषिजीने ऊपरकूं शिर उभारा देखतेहैं वोही महीना वोही मुहूर्त्त न वो पुरुष न वो घट है ऋषिजी कूं निश्चय हुआ यो परमेश्वर की माया देखी स्कन्दपुराण में केदारखण्ड में यो कथा भलेप्रकार लिखरही है और वासिष्ठादि ग्रन्थों में ऐसी वहुत कथा हैं और बहुत प्राणियों कूं यो वात प्रत्यक्ष है कि स्वप्न तो घड़ी वा दोघड़ी रहा और राज्यादि १०० वर्ष किये भले प्रकार विचारो मायामें क्या नहीं वनसक्ता और यो जाग्रत् निश्चय स्वप्न की वरावर है क्योंकि जाग्रत् के पदार्थ दुःख सुख के हेतुहैं और अनित्य हैं ऐसेही स्वप्न के पदार्थ हैं और जैसे जाग्रत् में स्वप्न का निश्चयकर करते हैं ऐसे स्वप्न में भी स्वप्नका निश्चय किया करते हैं तात्पर्य्य यो जाग्रतमें जो प्रपंच दीखताहै समस्त स्वप्नकी वरावर है मायाहै इससे सिवाय और क्या माया होगी कि गर्भमें ठहरकर वीर्य्य चेष्टा करने लगताहै और वहनेवाला जो पदार्थ वीर्य्य है उसका कार्य कैसा कठिन होजाताहै फिर उसी वीर्य में देखो कैसे हाथ पैरादि वनजाते हैं फिर वोही ब्राह्मण साधु चोर जार कहाजाता है किसी काल में तो वो लाड़ करने के योग्य किसी काल में भोग करने के योग्य

किसी कालमें पूजन करने के योग्य होताहै किसी काल-
में उसकूं देखकर प्राणी ग्लानि मानतेहैं किसीकालमें उ-
सकेपुत्रादि चाहते हैं कि यो मरजावे तो सुन्दरहै किसी
कालमें उन शरीरके स्पर्श करनेसे पातक लगताहै मकान
वस्त्रादि अपवित्र होजातेहैं विचारो एक पदार्थमें कितनी
अवस्था बीतती हैं जो एक रसपदार्थ नहीं सबकूं प्रका-
रका न दीखे सोईमायाहै चित्ततो बहुत चाहता कि ऐसी
कथा लिखकर इस बातकूं करामलकवत् सिद्ध कर
परन्तु ग्रंथका विस्तार होताहै बुद्धिमान एक दृष्टान्त
विचारलें अब विचारो कि वेदांत शास्त्रका मत कैसा सुन्द-
रहै परमेश्वर कूं तो परिपूर्ण नित्यमुक्त नित्यानंदादि
सिद्धि करना भक्ति ऐसी करनी अपना आप समस्त प-
मेश्वरमें झोक देना अपने अंशके नरखने से परमेश्वर
पूर्णतासिद्ध होतीहै और सबके मतकूं अंगीकार कर
सच्चा बताना यद्यपि स्वप्नके पदार्थ झूठे हैं परन्तु उस
मयमें तो सच्चेहैं और सब मतवाले अपनेही मतकूं हठ
के सिद्ध करतेहैं औरों की असूया करतेहैं पूर्व मीमांसा
परमेश्वरकूं नहीं मानते जो भेद उपासना वाले परमेश्व
मानतेभी हैं तो परिच्छिन्न मानते हैं जब जीव ब्रह्म
भेद कहा स्पष्टप्रतीत होताहै परमेश्वर परिच्छिन्नहै
जो वे ऐसा कहैं कि परमेश्वर की मायामें क्या नहीं
सक्ता तो परमेश्वर उनकूं आनन्दरक्खें क्योंकि योही

सिद्धान्तहै जब भेदवादियोंका अपने मतमें ठिकाना नहीं पाता तब मायाकूं अंगीकार करतेहैं मायाकूं अंगीकार किया और वेदांत शास्त्र में प्रवेश हुवा क्योंकि वेदांत से सिवाय और कोई प्रमाण नहीं वेदान्तकूं त्याग करके वृथा और अनात्म शास्त्रोंमें माथा मारतेहैं १८ विद्याहैं मुक्तिके लिये मुख्य वेदान्त शास्त्र है १४ विद्यातो येहैं ऋग, यजुर, साम, अथर्वण ये चारवेद और ६ इनके अंग शिक्षा, कल्प,व्याकरण, ज्यौतिष,छन्द, निरुक्त और मीमांसा शास्त्र, तर्कशास्त्र, पुराण, धर्मशास्त्र ये १४ विद्या हैं वेदान्त शास्त्र का मीमांसा में अन्तर्भाव है वैशेषिक शास्त्रका तर्कशास्त्र में और सांख्य पातांजल पाशुपत वैष्णव रामायण भारतादि का धर्मशास्त्रमें अन्तर्भावहै पुराण १८ हैं ब्राह्म पद्म स्कन्द मार्कण्डेय शैव वैष्णव गणेश सौर भगवत् भाविष्यत् ब्रह्मवैवर्त लिंग वामन वाराह कूर्म मत्स्य गरुड़ ब्रह्माण्ड और उपपुराण वाशिष्ठ लिंग नारसिंह नन्दीय नारदिय वामनीय हंस तत्वासार दौर्वास्य शिवधर्म कापिल वामन वरुण रेणुक वायवीय कालीय महेश्वर पाराशर मारीच भार्गवादि भेद से बहुत हैं मनु याज्ञवल्क्य विविष्णु यम आंगिरस वशिष्ठ दक्ष संवर्त शातातप पाराशर गौतम शंखलखित हरित आपस्तंबी संस कात्यायन वात्स्यायन बृहस्पति देवल नारद पैठीनसी इनके और ओरों के भी किये हुये

बहुत धर्मशास्त्र हैं कोई १८ विद्या कहते हैं आयुर्वेद धनुर्वेद गांधर्ववेद अर्थशास्त्र ये चार मिलकर १८ होजाती हैं कामशास्त्र का आयुर्वेद में अन्तर्भाव है नीतिशास्त्र शिल्पशास्त्र अश्वशास्त्र गज शास्त्र सूपकारशास्त्र और ६४ कलाओं का अर्थशास्त्र में अन्तर्भाव है इस प्रकार १८ विद्या हैं वेदांत शास्त्र का यो सिद्धांत है कि यो संसार स्वप्नवत्है निष्प्रपंच ब्रह्म में भ्रान्ति करके नाना प्रकारकी कल्पना कर रक्खी है जैसे कोई वागड़भूमिमें दूरसे रेतीकूं देखकर कहै कि यह नदी है कोई कहता है इसमें गोड़े जल है कोई कमर जल कोई अगम्य जल कहता है तात्पर्य सबकी कल्पना झूठी है जो जगत् सच्चा होता तों बड़े बड़े बुद्धिमान मीमांसा सांख्य पातांजलि न्यायशास्त्रादिवालों का सबका एक मत होता सबका मत पृथक् २ होने से स्पष्ट प्रतीत होताहै कि निष्प्रपंच ब्रह्ममें भ्रान्तिसे जगत् कल्पितहै इस बात की सिद्धि में बहुत श्रुति स्मृति आदि प्रमाण हैं और अनुभव में भी आवेहैं जैसी जैसी किसी की बुद्धिहै वैसी ही वैसा जगत्कूं कहते हैं और ईश्वर कूं भी यथा मति अन्तर्यामी से लगाकर कुलदेवता माता शीतला पीपल वृक्ष आदि जड़ पदार्थ तक कहते हैं सो कुछ थोड़ा थोड़ा उनका भी प्रसंग से सुनो पूर्वमीमांसाशास्त्र वाले तो कहते हैं कर्म करने से मुक्तिहै स्वर्गादि प्राप्ति कूं मुक्ति कहते

कर्म फलदाता है और कोई ईश्वर नहीं स्वर्गादि नित्य है उनकी उत्पत्ति प्रलय नहीं कोई एक देशी उनके ईश्वर कूं भी मानते हैं सांख्यशास्त्र वाले यह कहतेहैं कि जैसे दूधका दधि परिणाम होजाताहै ऐसे प्रकृति जगत् रूप करके परिणाम होगईहै और पुरुष जलगत पद्म पत्रवत् असंगहै तात्पर्य परिणामवाद सांख्यशास्त्रवालों का है आरंभ वाद या शास्त्रवालोंका है न्यायशास्त्रवाले यों कहते हैं कि यो जगत् प्रलयके समय ईश्वर की इच्छा से परिणामरूप होजाता है- अर्थात् पृथ्वी जल तेज वायु के परिमाणु होजाते हैं और सृष्टिके समय ईश्वर की इ-च्छा से परिमाणु मिलकर द्व्याणुक त्र्यणुक होकर फिर ऐसेही पृथ्वी आदि होजाते हैं और कहते हैं इस जगत् में सब सात पदार्थ हैं पृथ्वी जल तेज वायु आकाश का-ल दिक् आत्मा मन इन ९ पादार्थों कूं तो एकद्रव्य बो-लतेहैं और रूप रस गन्ध स्पर्श संख्या परिमाणु पृथक् संयोग विभाग परत्व अपरत्व गुरुत्व द्रवत्व स्नेह शब्द बुद्धि सुख दुःख इच्छा द्वेष प्रयत्न धर्म अधर्म संस्कार इन २४ पदार्थों कूं एक गुण बोलते हैं ये गुण द्रव्यों में रहते हैं इसीप्रकार कर्म सामान्य विशेष समवाय अभाव ये पांच पदार्थ हैं और यावत् जगत् में पदा-र्थ हैं उनका इन्हीं सात पदार्थों में अन्तर्भाव है। जीव ईश्वर का भेद कहतेहैं जीव ईश्वर दोनों व्यापक

हैं पृथिवी आदि चार द्रव्य कूं परमाणु रूप करके नित्य कहते हैं आकाशादि पांच द्रव्य कूं सदा नित्य कहते हैं। व्याकरण वाले कहते हैं शब्द ब्रह्म है सो नित्य है तात्पर्य वैयाकरण स्फोटवादी है पुराणवालों- का मत प्रसिद्ध है कोई विष्णु कोई शिव शक्ति गणेश सूर्यकूं ईश्वर कहते हैं अपने अपने मतक पृथक् पृथक् शास्त्र सात्वत तंत्र नारद पंचरात्र कवलार्णवादि बनार- क्खे हैं। तात्पय पुराणवालों का मत जैसा कि गरुड़वाले कहते हैं यो बहुत प्रसिद्धहै कहांतक लिखें बहुत मतहैं। सांख्य न्यायशास्त्रादि वालोंका मत उसी जगह निश्चय होसक्ता है। यहां तो एक नाममात्र उनका मत दिखा दि- या है और नास्तिक बौद्ध चारुवाक्यादि के १८ मत तो मुख्यहैं और भी बहुत भेद हैं वे ईश्वर वेद कूं नहीं मानते कोई शून्यवादी कोई कालवादी कोई स्वभाववादी कोई विज्ञानवादी हैं कोई कपाली मतके हैं नानामत नास्तिकों के हैं और कठिनहैं पुराण वालोंके मतसे उनका बहुत बारीक मत है ऐसे ऐसे मत न्याय वेदान्त के पूर्वपक्षोंमें बहुत लिख रहेहैं क्योंकि वेदान्त नैयायक उनके मतकूं खण्डन करसक्ते हैं। पुराणवालों से उनका मत खण्डन नहीं हो सक्ता उनकी युक्ति बहुत बारीक है और जो पाखण्ड अब कलियुग में प्रसिद्ध है उनका लिखना योग्य नहीं। ता-

त्पर्यं चारवर्ण चार आश्रम और अनुलोमज प्रतिलोमजादि जाति शास्त्रविहित हैं उनसे पृथक् जिसका वेद स्मृतियों में पता न लगे सब पाषण्ड मनुष्यों के रचे हुये हैं बुद्धिमान् को विचार लेना चाहिये अन्तर्यामी हिरण्यगर्भ विराट कूं वैदिक उपासनावाले ईश्वर कहते हैं। शिव विष्णु शक्ति सूर्य गणेशादि कूं पुराणवाले ईश्वर कहते हैं। भूम या भौपाल भूत पिशाच योगिनी श्रापा पीपल कुदालादि अनेक हैं उनकूं प्राकृत जीव ईश्वर कहते हैं। इसके पूजनेसे सृष्टिहोतीहै इस हेतुसे वे ईश्वर कहते हैं वेदोंमें और लोकमें अन्तर्य्यामी सूत्रात्मादि भेद करके विष्णु शिवादि भेद करके राम कृष्णादि भेद करके राधावल्लभ गोपालादि भेद करके हनूमान भैरवादि भेदकरके पाषाण मृत्तिकादि भेद करके हजारों भेद ईश्वरके प्रतीत होते हैं अब बुद्धिमान् विचारैं कौनसा ईश्वर सच्चाहै कौनसा मत सच्चाहै हम सत्य कहते हैं योंहीं विचारो कि यह सब माया है विवर्तवाद आभासवाद अजातवाद वेदांतशास्त्रवालों का है सोई सत्यहै और तत्त्वं पदों का जो एक लक्ष्यार्थ सच्चिदानन्द रूप है सोई परमेश्वर है इसीकूं ज्ञान कहते हैं योही ज्ञान मुक्ति का हेतु है॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिणीअष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

अथ नवमोऽध्यायः ॥

मू० । देहादिके साथ तादात्म्य करके देहादि में जो अहंबुद्धि इसी कूं अज्ञान कहते हैं यो विचारो कि आत्मा तो शुद्ध १ परिपूर्ण २ सत्य ३ चैतन्य ४ आनन्द ५ अखण्ड ६ अज ७ अमर ८ एकरस ९ और भी बहुत विशेषणहैं और अशुद्ध देह १ परिछिन्न २ असत्य ३ जड़ ४ दुःखरूप ५ एकदेशी ६ जन्मवाला ७ नाशवाला ८ नित्य एकरस नहीं रहता ९ आत्माकी और देह की जो एकता देखते हैं इससे परे और क्या अज्ञान होगा इस अज्ञान का कारण आसुरी सम्पत् है सोई दिखलाते हैं। दम्भ दर्प अहंकार अपवित्र अभिमान् ईश्वरकूं न मानना क्रोध कठोरता मूर्खता धर्म्मकी प्रवृत्ति कूं न जानना अधर्म्म की निवृत्तिकूं न जानना असत्य बोलना जगत् कूं अनीश्वर कहना बड़ी बड़ी कामना मनमें रखनी जो कभी पूर्ण नहीं खोटे खोटे आग्रह करके सज्जनों से वर करना गुणवानों में दोष निकालना बुद्धि तमोगुणी होनी अर्थात् हमने कथा कही थी उससे हमारी क्षति हुई शास्त्रवालों कूं पाषण्डी कहना चिन्ता ऐसी ऐसी करनी जिसका प्रलय पर्यंत ठिकाना न लगे निश्चय यो रखना जो हम खा पहर जावेंगे स्त्रियोंके साथ आनन्द भोग जावेंगे यही मुख्य है देना नट बन्दरवालों कूं कभी किसी साधु ब्राह्म-

ण कूं जो देता तो दम्भ अहंकार करके और उनका तिरस्कार करके हजारों आशा रूपी फांसियोंमें बँधे रहना अन्याय करके रुपयादि संचय करना यो मुझकूं प्राप्त है जो प्राप्त करूंगा मेरी वरावर और कौन है धन हमारे बहुत कुटुम्ब हमारे बहुत ऐसे २ अवगुण आसुरी सम्पत्वालों कूं श्री भगवान् ने कहे फिर कहा ऐसे पुरुषोंकी मुक्ति तो दूर है मुक्ति का मार्ग भी उनकूं नहीं मिलेगा ये पुरुष जगत् के भ्रष्ट करनेवाले हं ऐसोंकूं हम पशुकी योनियोंमें फेकेंगे वारम्वार सर्प विच्छू कीट शूकर कूकरादि योनियोंमे जन्म लेते रहेंगे फिर कहा काम क्रोध लोभ ये तीन नरकके द्वारे हैं आत्माकूं मूढ़ योनियोंमें प्राप्त करनेवाले हैं उनकूं तो अवश्यही त्याग करना चाहिये प्रथम उनकूं त्याग करके जो पीछे मुक्ति में प्रयत्न करेगा तव सिद्ध होगा अर्जुनने श्रीकृष्ण महाराज से प्रश्न किया। महाराज किस करके प्रेरा हुआ यो पुरुष पापकूं करता है इच्छा नही भी करता परन्तु ऐसा प्रतीत होताहै जैसा कोइ वल करके पापमें जोड़ दे श्रीभगवान् ने कहा हे अर्जुन जो तुमने बूझा पाप करने में क्या हेतु है सो सुनो काम हेतुहै कामनाहोनेसे क्रोध होताहै रजोगुणसे इसकी उत्पत्ति है रजोगुणके जय करने से इसका भी जय होजाताहै अनन्त है भोजन जिसका वड़ा पापी मोक्षमार्ग का वैरी काम कूं जानो जैसे धूपने अग्नि कूं मलने दर्प-

ण कूं जेरने गर्भकूं ढक रक्खा है ऐसे कामने विवेककूं ढक रक्खा है प्राकृतियों कूं तो यो काम भोग समय मित्र-सा प्रतीत होताहै ज्ञानी कूं तो भोगसमय भी दोषदृष्टि होने से वैरी दीखता है कितनाहीं भोग भोगो कभी तृप्ति न हो और दूनी अग्नि लगै इसकी जय का उपाय यों है यो काम इन्द्रिय मन बुद्धि में रहताहै क्योंकि विषय कूं देखा सुना संकल्प विकल्प किया निश्चय किया फिर कामका आविर्भाव होजाता है सो काम विवेक कूं आवर्ण करके आत्मा कूं मोहता है इसलिये यावत् इन्द्रिय का विषयके साथ सम्बन्ध नहीं हुआ प्रथम मोह से विषयमें दोषदृष्टि करके इन्द्रियों कूं रोकना फिर इन्द्रिय नहीं रुकसक्ती देह इन्द्रिय मन बुद्धिसे परे जो आत्मा उसकूं आश्रय करके इस पापी काम कूं मारा जैसा यो परमेश्वर ने अर्जुन कूं उपदेश किया ऐसाही किसी गुरुने शिष्यकूं उपदेश किया कि हे शिष्य ये काम क्रोधादि प्रथम तो ज्ञानकी सिद्धिके लिये त्यागने योग्य हैं और ज्ञानहुये पछि जीवन्मुक्ति के लिये त्यागने योग्यहैं शिष्य कहता है महाराज जीवन्मुक्ति मुझकूं मतहो देहपातके पछितो मैं विदेहमुक्त होजाऊंगा गुरू कहते हैं जो तुमने यहांके तुच्छ पदार्थों के भोगने के लिये जीवन्मुक्ति का अंगीकार नहीं किया तो निश्चय होताहै स्वर्गादि पदार्थोंके भोगनेके लिये विदेहमुक्ति का भी अंगीकार नहीं करोगे

इस हेतुसे प्रतीत होताहै तुम स्वर्गमात्र से आपकूं कृतार्थ जानोगे फिर निश्चय आपका जन्म होवेगा जो कभी तुमने अपने मनमें यो मानाहो कि स्वर्ग क्षय अतिशय साहस्य पतन इन तीन दोषों करके त्यागना योग्य है ॥

टी०—दिन दिन प्रति अपनाकिया हुआ पुण्यकाम होता रहताहै इसकूं तो क्षय दोष कहतेहैं और जैसे इस लोकमें चक्रवर्त्ती राजासे लगाकर कंगाल पर्यन्त तारतम्यताहै ऐसे स्वर्गमें विमान ऐश्वर्यादि की तारतम्यता है अपने से अधिक विमान वाले कूं देखकर मनमें अतिशय रहता यो दूसरो दोष है और जब समस्त पुण्य नाश होताहै तब उसके गलेकी माला सूख जाती है वो तो अपने आप वहांसे नीचे गिरना नहीं चाहता परन्तु वही स्त्री जिनके साथ विहार करताथा टांग पकड़ कर उलटा डाल दिया करती हैं तीसरा यो साहस पतन दोषहै ॥

मू०—विचारो कि इन तुच्छ पदार्थों में जो अनेक दोषकरके युक्त हैं श्रीभगवान् भी कहतेहैं ये शब्द स्त्री आदि भोग निश्चय दुःख के कारण हैं उनके नाश अप्राप्ति में जो दुःख हैं सोतो प्रसिद्धहैं परन्तु प्राप्ति काल में भी स्पर्द्धा निन्दा भयादि दोषों करके युक्त दुःख रूप हैं फिर उनमें दोषदृष्टि करके क्यों नहीं त्यागते जब ये तुच्छ पदार्थ न त्यागे गये स्वर्गादि के पदार्थोंकूं कैसे त्यागोगे और यो तुम्हारा इच्छा पूर्वक आचरण अनिष्ट है इस बातमें श्री सुरेश्वराचार्य जीके वाक्य कूं प्रमाण देते हैं जानाहै ब्रह्म-

तत्त्व जिसने उसका जो इच्छापूर्वक आचरणहुआ तो कूकर पशु आदि और ज्ञानियों में क्या भेद हुआ जब धर्म कर्म शास्त्रकी आज्ञाकूं न मानकर इच्छा पूर्वक आचरण किया फिर अशुचि भोजन में किसप्रकार दोष प्रतीत होगा शिष्य कहताहै महाराज मुझकूं इतनेही मात्रसे अनिष्ट सूचन किया गुरु उपहास पूर्वक कहतेहैं ज्ञानसे प्रथम तो तुमकूं मनमात्रके दोषों करके क्लेश था अब समस्त लोगों की निन्दा सहनी अंगीकार करते हो आपके बोधकी क्या स्तुति होसके आपके बोधका जो वैभव है सो आश्चर्य है ऐसा बोध तो हमकूं भी नहीं हुआ यो बात लोकमें प्रसिद्धहै जो काले कम्बल पर और भी छींट स्याही की पड़ जावे तो कुछनहीं प्रतीत होती परन्तु श्वेत चादरपर जो एक छींट भी और रंग की पड़जावे वो भी दूरसे चमकतीहै ऐसे ज्ञानीका जो किञ्चित् भी अन्यथा आचरण प्रतीत हो तोभी मूर्ख उस बातकूं बढ़ाकर कुछ कुछ बकने लगतेहैं यो तो उनकूं विचारही नहीं कि जो विधिनिषेध व्यवहारहै यो गुणों का कार्यहै द्रष्टा उनका असंग है और जो स्वसंवेद लक्षण ज्ञानीके हैं उनकूं मूर्ख क्या जानेंगे केवल जड़भरतादिके दृष्टान्त देदे कर निन्दा करैंगे और जो उनकूं कहा बोधहै है कि ये तीनों गुण सदा विदेह मुक्त से प्रथम सबमें देवतासे लगाकर पशु पर्य्यन्त रहतेहैं किसीके थोड़े किसीके बहुत और यो सब देखना

सोना खाना पीना आदि अन्तःकरण का धर्महै अन्तः-
करण माया का कार्य होनेसे मिथ्या है कोई कोई तो ऐसा
जानतेहैं कि अन्तरंग साधन मुख्यहै बहुत तो बहिरंग
साधनोंकूं प्रमाण देदेकर निन्दा स्तुति करते हैं शिष्य कह-
ताहै महाराज फिर क्या करना चाहिये गुरू कहते हैं
करना क्या चाहिये यो करना चाहिये जो शूकर कूकर
की बराबरता है इसकूं वमनवत् त्यागदो तुमतो विचार-
वान् हो जितने अन्तःकरण गत दोषहैं सबका संग त्याग
करके देवताकी बराबरता अंगीकार करो तुम इन मनुष्यों
करके देवताके सम पूजनेके योग्यहो काम क्रोधादि में
जो जो दोष दुःखहैं सब मोक्षशास्त्रमें प्रसिद्ध हैं वहांसे
तलाश करके दोषदृष्टि कर कर कामनादि का त्यागकरके
जीवन्मुक्तिं सम्पादन करो शिष्य कहताहै महाराज मैंने
अंगीकार किया कामादिका तो त्याग करूंगा परन्तु
मनोराज्य करने में तो मेरीक्षति नहीं गुरू कहते हैं मनो-
राज्य कूं समस्त दोषों का बीज होने से श्रीभगवान् ने क्षति
कहीहै उस अर्थकूं घटातेहैं बैठे बैठे मनोराज्य हुआ अमुक
पदार्थ में अर्थात् स्त्रियादि में यो गुणहै उस गुणको ध्यान
करते करते उस पदार्थ में सूक्ष्म संयोग होगया संग होने-
के पीछे फिर अधिक कामना होगई कामना रूपी जो अग्नि
उसकी शान्तिके लिये किसीके पासगये कहा हमकूं यो
वस्तु चाहती है उन्होंने न दी तब क्रोध उत्पन्न हुआ अब

अपने दोषकूं तो विचारतेनहीं कि यो मेरे मनोराज्य ने अनर्थ किया है उसमें दोष निकालतेहैं कहते हैं देखो कैसे पापी अधर्मात्मा जी हैं साधु ब्राह्मण की आज्ञा नहीं करते क्या धन छाती पर धरके लेजावेंगे और अनेक कहने, न कहनेके योग्य शब्दों कूं कहते हैं और जो मनमें ताप होता है उसके तो आप साक्षीहैं फिर क्रोधसे सम्मोह अर्थात् कार्य अकार्य के विवेकका अभाव होगया फिर जो शास्त्र गुरूसे सुना सब भूल गये फिर चेतना रूपी बुद्धि का नाश होगया अर्थात् फिर भी होशियार होजावें यो बुद्धि न रही फिर अपने पुरुपार्थ से भ्रष्ट होगये विचारो मनोराज्य ने कैसा अनर्थ किया जो मनोराज्य होकर मनमें कामना आई थी तो उसमें प्रवर्त न होनाथा जो प्रवर्त भी हुये थे तो उनके न देने में जो अपमान हुआ था उसकूं सहजाना था उनकूं कुछ यद्वा तद्वा न कहनाथा. जो उससमय इन्कार भी करदिया था अथवा दुर्वाक्य भी कहदिया था तो फिर सत्वगुणी वृत्तिमें काम आते जो कुछ वे दाता भी थे आगेकूं जो उनसे काम निकलता सो सब नष्टहोगया उनकूं तो क्रोधमें आकर यद्वा तद्वा कहवैठे फिर यो मुख न रहा कभी उनके समीपही जा वैठें और जो कभी उनके सत्वगुणी वृत्तिका विशेष उदयहो और वहुत दानकरें तो आपकूं कुछ नहीं मिलसक्ता सारी अवस्थाकूं तो उनसे मुरव्वत तोड़ बैंठे और जिन्होंने सुना उन्होंने भी अपने आप-

से मन फेर लिया वारम्वार विचारो मनोराज्यवड़ा अनर्थ करताहै इसलिये मनोराज्यकाभी जयकरो मनोराज्य कामनाका जय करनेसे ज्ञानद्वारामुक्त होजाताहै ॥

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिणीनवमोऽध्यायः ॥९॥

अथ दशमोऽध्यायः ॥

प्रथम थोड़ेसे साधन जीवन्मुक्तिके लिये लिखभी आयेहैं अव और भी सुनो जिनकें अनुष्ठान करने से कामादि का जयहोजाता है साधक कूं तो अभ्यास करनेसे सिद्ध होते हैं सिद्धमें स्वभाव से रहते हैं जीवन्मुक्ति के ५ प्रयोजन हैं प्रथम उनकूं लिखते हैं ॥ ज्ञानरक्षा १ तप २ विस्मयादि का अभाव ३ दुःखों की निर्वृत्ति ४ सुखका आविर्भाव ५ अर्थ इनका योंहै जीवन्मुक्तिके अभ्यास करनेसे संशय विपर्य्ययका उदय नहीं होता शुक राधव अस्म दादिवत् अकृत उपासक कूं कदाचित् संशयादिके उदय होनेके भयसे अवश्य जीवन्मुक्तिं का अभ्यास करना योग्यहै श्रीभगवान् कहते हैं जिसके संशय है जो नाश होता है संशयादि का उदय न होना ज्ञान रक्षा १ चित्त की एकाग्रता तपहै सव धर्मों से श्रेष्ठहै ज्ञानी का तप लोकसंग्रहके अर्थ है श्रीभगवान् कहते हैं श्रेष्ठ पुरुष जो जो आचरण करता है सोई सो और भी आच-

रण करते हैं संग्रह भले तीन प्रकार के हैं शिष्य १ भक्त २ तटस्थ ३ शिष्य तो गुरूके शास्त्र विहित आचरण कूं देख देख अधिक अधिक श्रद्धा होकर फिर उनके वाक्य में विश्वास करके मुक्त होता है १ और भक्त उनकी पूजादि करके वांछित फलकूं प्राप्त होता है ❀ विभूति की कामना वाला ज्ञानी का पूजन करे जिस जिस लोक की मनसे भावना करेगा और जो जो कामना चाहेगा उसी उस लोक और उसी उस कामना कूं प्राप्त होगा यो श्रुतिका अर्थ है. स्मृति का भी अर्थ सुनो जो एक ब्रह्म का जाननेवाला भोजन करे तो समस्त जगत् तृप्त होता है इसलिये जो कुछ देवे योग्य है सो ब्रह्मवित् कूं देना चाहिये तटस्थ दो प्रकार का है सन्मार्गी १ असन्मार्गी २ सन्मार्गी तो ज्ञानीके आचरणकूं देख देख अपने आप सदाचार करके मुक्त होगा, असन्मार्गी जीवन्मुक्ति की दृष्टि करके सारे पापांसे मुक्त होगा यहां स्मृति प्रमाणहै जिसकी अनुभव पर्यंत बुद्धि तत्त्व के विषय प्रवर्तहै उसकी दृष्टिगोचर जो होगा अर्थात् कृपादृष्टि से जिसकूं वे देखेंगे वो सारे पापों से छूट जावेगा जो ज्ञानी कूं वाणी आदि करके दुःख देंगे मन करके द्वेष करैंगे वे ज्ञानीके पापकूं ग्रहण करैंगे यहां श्रुति प्रमाणहै सुहृद ज्ञानी के पुण्य द्वेषी ज्ञानी के पापकूं ग्रहण करेंगे यो श्रुतिका अर्थ है २ जिस समय ज्ञानी की बहिर्मुख वृत्तिहो उस समय उसकूं कोई

दुर्वाक्य बोले उसकूं सुनकर अथवा वृथा कोई मार भी दे चित्त की वृत्ति में रागद्वेष उदय न होना इसका नाम विसम्वाद का अभाव है ३ संसारके व्यवहार में धनके सञ्चयादि में अनेक प्रकार के दुःख और मुक्तिके लिये श्रवणादि में अनेक दुःख हैं जीवन्मुक्तके सब दुःख नाश होजाते हैं यदि आत्माकूं जान्ता है कि मैं योहूं फिर किसकी इच्छा करता हुआ और किस कामनाके लिये शरीरकूं दुःख दे यों श्रुति का अर्थ है ४ समाधि करके दूर करदियेहैं चित्तके मल जिन्होंने और आत्मामें प्रवेश किया है चित्त जिन्होंने उनकूं जो सुख होताहै उसकूं वाणी नहीं कहसक्ती अपने अनुभव करके जाना जाताहै योश्रुतिका अर्थ है जैसे कोई १६ वर्षकी स्त्रीसे १०,११ वर्षकी लडकी बूझे कि तू सुसरालमें गई थी तुझकूं पतिके संगमें क्या आनन्द हुआ जैसे वो उस आनन्दकूं अनुभव करती हुई उनकूं कम समझ जान कर हँसकर चुपहो जातीहै ऐसे ज्ञानी ब्रह्मानन्द कूं अनुभव करते हुये औरों को कम समझ जानकर मौन रहतेहैं यो सुखाविर्भाव पांचवां प्रयोजन जीवन्मुक्ति का कहा ५ जीवन्मुक्तिके लिये जो अष्टांग योग कहते हैं उसकूं भी थोड़ासा सुनो योगके ८ अंगहैं यम, नियम, आसन, प्राणयाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान समाधि, अर्थ-इनका पातांजलशास्त्र में भले प्रकार निश्चय होसक्ता है यहां इसलिये नहीं लिखा कि इस योग

करनेकी सम्प्रदाय लोप होरही है विना गुरु वो योग सिद्ध नहीं होसक्ता जिसकूं ये योग करनाहो और कोई गुरु मिले तो वहांसे उनका अर्थ निश्चय करे परन्तु और प्रकार भी उनका अर्थ करतेहैं परिपक्व है चित्त जिनका वे इनका ऐसा अर्थ निश्चयकरें. देहादिमें विरक्ति यम १ स्वात्मतत्त्वमें अनुरक्ति नियम २ जैसे बैठे चलते लेटे सुखपूर्वक निरन्तर ब्रह्मका चिन्तवन होता रहै वही आसन है सुख पद्मादि आसन मन्दके लिये हैं ३ प्राणके चलते हुये अपने आप सदा यो जपतप होतारहै सोऽहम् सोऽहम् सोऽहम् इसका जो अर्थ उसमें चित्तकूं स्थिर करना अर्थात् योंही निश्चय रखना कि मैं ब्रह्महू ४ श्रोत्रादि इन्द्रियों कूं शब्दादि विषयोंसे रोकना प्रत्याहार ५ बुद्धि कूं विषयोंसे विमुख करना धारणा ६ जहां जहां दृष्टि जावे वहीं वहीं ब्रह्म देखना दृष्टि कूं ब्रह्ममयी करके सब जगत् कूं ब्रह्ममय देखना सो दृष्टि श्रेष्ठ है अथवा द्रष्टा दर्शन दृश्य इनका जहां विराम हो वहीं दृष्टि करनी नासाग्र दृष्टि बालकों के लिये है ७ मैं असंग सच्चिदानन्दपरिपूर्ण निरवयव एक रसहूं इस प्रकार चित्तका समाधान करना समाधि सो दो प्रकार की है सविकल्प १ निर्विकल्प २ त्रिपुटी सहित सविकल्प १ त्रिपुटी रहित निर्विकल्प २ निर्विकल्प समाधि करनेके समय चार विघ्न होते हैं लय १ निद्रा आजानी विक्षेप २ वारम्वार विषयों का अनुसन्धान होना कषाय ३ चित्त

का रागादिसे तो हट आना परन्तु स्वरूपमें नपहुँचना बीचकी वृत्तिका नाम कषाय है इसीकूं स्तब्धीभाव कहते हैं रसास्वाद ४ समाधि के आरम्भ समय सविकल्पका आनन्द होना कि मैं ऐसा आनन्दरूप परिपूर्णहूं यो चिन्तवन होना इस कूं रसास्वाद कहते हैं प्राणायाम आसन विषयोंमें दोष दृष्ट्यादि करके लय विक्षेपादि का जय करना चाहिये बसिष्ठ जी कहते हैं चित्तनाश करने के दो मार्ग हैं ज्ञान १ योग २ ये दोनोंमार्ग भगवान्‌नेभी गीताशास्त्रमें कहे हैं देहादि से परे आत्माकूं जानना अर्थात् असंग नित्य मुक्त अपने कूं निश्चय करना यो ज्ञान है और चित्तकी वृत्तिका निरोध करना इसका नाम योगहै. चित्तवृत्तिनिरोध का प्रकार चार प्रकार से वशिष्ठ जीने कहाहै सदा वेदान्त शास्त्र कूं पढ़ना सुनना विचारना १ जो ब्रह्मनिष्ठ साधु हैं उनका संग करना २ समस्त वासना का त्याग करना ३ अष्टांगयोग करना ४ प्रथम साधन उत्तम अधिकारीके लिये हैं जो वहां चित्तका निरोध न हो तो ये तीन उत्तरोत्तरहैं ❋ और जो चित्त के निरोधका प्रकार आत्मा संयम योग नाम करके श्रीभगवान्‌ने गीताशास्त्र में कहाहै उसकाभी अर्थ संक्षेप करके लिखते हैं-योगी मनकूं समाहित करे अकेला एकान्तमें बैठकर भलेप्रकार जीतेहैं वशकिये हैं मन इन्द्रियादि जिसने सो निराकांक्ष होकर शरीर यात्रा से सिवाय

भोजन वस्त्रादि सामग्री कूं त्याग करके पवित्रदेश में शुद्ध भूमि में अपना आसन विछाकर वो आसन बहुत नीचा ऊंचा न हो नीचे कुशाका आसन जापर उसके मृग च-र्मादि फिर ऊपर वस्त्र विछाकर मनकूं एकाग्र करके वश-करीहैं चित्तइन्द्रियों की क्रिया जिसने सो उसपर बैठकर चित्तकी शांतिके लिये अभ्यास करै चित्तके एकाग्र क-रने में देहकी धारणा भी उपयोगी है उसका धारण प्रका-र लिखते हैं-देहका जो मध्यभाग है उसकूं शिर और ग्री-वा कूं सम निश्चय करके नासाग्र दृष्टि होकर पूर्वादिकूं नहीं देखता हुआ दूर होगया है भय जिसका सो ब्रह्म-चारी व्रतमें स्थित होकर आत्मा में है चित्त जिसका। आत्माही हैं परं पुरुषार्थ जिसके इस प्रकार युक्त होकर बैठे श्री भगवान् कहतेहैं जो इस प्रकार सदा मनकूं समा-हित करताहुआ निरोध हुआहै अन्तःकरण जिसका सो पराशान्ति कूं प्राप्त होता है बहुत खानेवाले थोड़े खाने-वाले कूं भी बहुत सोनेवाले बहुत जागने वालेकूं भी योग सिद्ध नहीं होता तात्पर्य्य शास्त्रविहित सोना जागना बो-लना चलना भोजनादि क्रिया जो नियम करके करेगा उसकूं दुःखोंका नाश करनेवाला यो योग सिद्धहोता है किस कालमें योग सिद्ध होताहै इस अपेक्षा में कहतेहैं जिस कालमें वश किया हुआ चित्त आत्माही में निश्चय ठहरता है सब कामना जो इसलोक परलोक की हैं उनकी

इच्छा नहीं करता उस कालमें जानो कि योग सिद्ध हुआ
जैसे दीवा बन्दमकान में एकरस प्रकाशता है हलता
नहीं ऐसे जीताहै चित्त जिसने उसका चित्त प्रकाशता
और निष्कंपता करके ठहरता है योग करके निरुद्ध हुआ
चित्त जिस अवस्थामें संसारके विषयों से उपराम हो
और जिस अवस्था में शुद्ध मन करके आत्माही को देखै
आत्माही में तोष करै उस अवस्था में निरतिशयसुखकूं
अनुभव करता है फिर उस अवस्था में स्थित हुआ तत्त्व-
से नहीं चलता उस सुखकूं लाभ करके अपर जो ब्रह्म लो-
कादि के सुख उनकूं अधिक नहीं जानता उस अवस्थामें
स्थित हुआ बड़ेभारी दुःख करके भी नहीं विचलता दुः-
ख का प्रथम किंचित् संयोग मात्र करके समस्त दुःख
और विषय सम्बन्धी दुःखोंका वियोग है जिस में उसीकूं
योग जानना सो योग आचार्य शास्त्रको निश्चय करके अ-
वश्य अभ्यास करना चाहिये दुःख बुद्धि करके प्रयत्न की
जो शिथिलता उसकूं त्यागना चाहिये टिट्टीके पुरुषार्थ
कूं स्मरण करना योग है जैसे कोई यो संकल्प रखता है
कि मैं कुशाके अग्र भाग में जितना जल ठहरता है कु-
शासे इतनाही जल उठाकर समुद्रकूं सुखाऊंगा ऐसाही चि-
त्तके निरोध करने का संकल्प रक्खे संकल्प से आविर्भा-
व है जिनका ऐसे योग की प्रतिकूल जो कामना उनकूं स-
बकूं त्याग करके और मन करके सब तरफ से इन्द्रिय ग्रा-

मनकूं रोककर धैर्यकरके शनैः शनैः अभ्यास क्रम करके उपराम हो सहसा एकवारही जो पूर्वावस्था में खाना सोना बोलना बैठनादि था उनका सबका त्यागन करे आत्मामें भले प्रकार मनकूं स्थित करके कुछ चिंतवन न करे पूर्वाभ्यास रजोगुण के वश में मन जो फिर चले तो प्रत्याहार करके अर्थात् जिस जिस विषयमें मन जावें वहीं वहींसे रोक कर मन कूं वश करे अर्थात् आत्माके विषय स्थिर करे इस प्रकार अभ्यास करते करते रजोगुण का क्षय होने से योगसुख प्राप्त होजाताहै शान्त होगयाहै रजोगुण जिसका इसी हेतुसे शान्त है मन जिसका प्राप्त हुआ है ब्रह्मतत्त्व जिसकूं उसकूं समाधिजन्य सुख अपने आप प्राप्त होताहै ऐसे सदा अभ्यास करते हुये योगी दूर होगये हैं पाप जिसके वो अनायास सुखपूर्वक ब्रह्मतत्त्वकूं प्राप्त होताहै फिर कृतार्थ होजाता है सो योगी सब भूतों में अपने आत्माकूं और सब भूतोंकूं अपने आत्माके विषय देखता है सारे सम दृष्टिहैं जिसके उनकूं श्री भगवान कहतेहैं कि जो मुझकूं सर्वत्र देखताहै उसकूं मैं सदा अपरोक्ष हूं वो मुझसे पृथक् नहीं जो मुझकूं इसप्रकार जान्ता है जैसे उसकी इच्छा हो कर्म त्यागकरके तो याज्ञवल्क्यवत् कर्म करता हुआ जनकवत् निषेधकर्म करताहुआ दत्तात्रेयवत् वर तो निश्चय मुक्तहोगा वो सर्व प्रकार मेरे विषय वर्तता है मुझसे पृथक्

कुछ नहीं जान्ता जैसे आपकूं दुःख सुख होते हैं दूसरे के दुर्वाक्य बोलने में दुःख स्तुति करने में सुख ऐसेही अपनी उपमा करके सबकूं सम देखे किसी कूं दुःख न दे ऐसा पुरुष मझकूं परं सम्वत् है यो योगका लक्षण श्रीभगवान् ने अर्जुन कूं कहा अर्जुन इस योगकूं असम्भव मानते हुये बोलते भये हे परमेश्वर समताकरके अर्थात् मनकी दो गति लय विक्षेप उनकूं जयकरके केवल. आत्माकार अवस्थान करके जो जो योग आपने कहा इस योग की दीर्घकाल जो स्थिति उसकूं नहीं देखता हूं किस हेतुसे मनकूं चंचल होनेसे हे कृष्णचन्द्र मन चंचलहै स्वभावहीसे चपलहै प्रमेथन शीलवाला इन्द्रियों कूं क्षोभकरने वाला बलवालाहै विचारकरके भी जीतनेके योग्य नहीं प्रतीत होता विषय बासना करके अनादि का विषयों के साथ बँधाहुआ है इस हेतुसे दुर्भेदहै जैसे महाराज आकाशमें पवन चलताहै उसकूं घटादि में रोकना कठिनहै ऐसे मनका निग्रह कठिन जानताहूं वशिष्ठजी भी कहते हैं समुद्र का पान करजाना सुमेरुकूं उखाड़ लेना आदि जो बहुत कठिन प्रतीत होते हैं सो होजाते हैं पन्तु मनका निग्रह कठिनहै इस बातकूं अंगीकार करके मनके निग्रहका उपाय दिखाते हुये श्रीभगवान् बोलते भये हे अर्जुन जो तुमने कहा सो सत्यहै मन ऐसाही है परन्तु मनकी दो गतिहैं लय १ विक्षेप २ सो लयकूं तो अभ्यासकरके अर्थात्

आत्माकार प्रत्ययवृत्तिकरके जय करना और विक्षेप कूं वैराग्यकरके अर्थात् विषयोंमें दोषदृष्टि करके जय करना इन दो उपायसे निश्चय मनका निग्रह होजाता है अन्तःकरण की वृत्तियों का सूक्ष्म होजाना इसीका नाम मनोनिग्रह है जिन्होंने देहादि नहीं वश किये हैं उनकूं तो यो योग कठिनहै जिन्होंने अभ्यास वैराग्य करके मनकूं वश करलिया है उनकूं यो योग इसी उपायकरके सहजहै अर्जुन बूझते हैं महाराज प्रथम तो कोई पुरुष इस योगमें श्रद्धा करके प्रवर्त हुआ परन्तु पीछे उसने भले प्रकार प्रयत्न न किया शिथिलाऽभ्यास रहा योग से चित्त चलकर विषय सें प्रवर्त होगया तात्पर्य मन्द वैराग्य होगया अथवा अभ्यास करते करते देहका बीचमें पात होगया वो पुरुष योगका फल जो ज्ञान उसकूं नहीं प्राप्त होकर किस गतिं कूं प्राप्त होताहै क्योंकि कर्मोंके फलकूं परमेश्वर में अर्पण करने से अथवा कर्मोंका अनुष्ठान न करनेसे स्वर्गादिकी प्राप्ति जो फल सो तो उसकूं होंगे नहीं ज्ञानके न होनेसे मुक्त न होगा दोनों तरफ से भ्रष्ट हुआ महाराज कहीं छन्नाऽभ्रवत् यो वही में नाश होजाताहै हे परमेश्वर आप सर्वज्ञ हो इसका उत्तर देसक्ते हो श्रीभगवान् बोलते भये हे अर्जुन इस लोकमें तो उसका जो दोनों मार्ग से भ्रष्ट होनां है और परलोकमें जो नरक की प्राप्ति ये दोनों उसके नहीं क्योंकि अच्छा कर्म करनेवाला कोई भी दुर्गति कूं नहीं

प्राप्त होता और जो तो श्रद्धा करके योग में प्रवर्त होने से शुभकारी है फिर उसकी क्या गति होती है इस अपेक्षा में कहते हैं ब्रह्मलोकादि जो पुण्यकारी पुरुषों के भोग स्थान उनकूं प्राप्त होकर और बहुत दिन वहां के भले प्रकार भोग भोगकर जो इसलोक में पवित्र धनवाले पुरुष हैं उनके कुलमें वो योगभ्रष्ट जन्म लेताहै यह गति तो बड़े अभ्यास करनेवाले की है और जिसके ज्ञान होनेमें कुछ थोड़ीसी देररहीथी वह बुद्धिमान् ब्रह्मनिष्ठ योगियोंके कुलमें जन्म लेता है इस लोकमें मुक्तिका हेतु होनेसे ऐसा जन्म होना बड़ा दुर्लभ है वो जो पूर्वदेहमें ब्रह्मविषय बुद्धि करके योग करताथा फिर वो दोनों कुलमेंसे किसी कुलमें उसी योग कूं प्राप्त होजाता है फिर अधिक मुक्तिके लिये प्रयत्न करता है जो पराये वशभी हो तोभी पूर्वाभ्यास उसकूं विषयों से हटाकर ब्रह्मनिष्ठ कर देता है इस अर्थकूं कैमुतिकन्याय करके दृढ़ करते हैं ज्ञानकी इच्छावाला जो नर कुछ ज्ञान उसकूं प्राप्त नहीं हुआथा और पापके वशसे योगभ्रष्ट भी हुआ परन्तु फिर काल पाकर जिसकी योगति कि शब्दब्रह्मकूं उल्लंघ कर पर्तता है तात्पर्य वेदोंने प्रतिपादन किये जो स्वर्गादि फल उनका तिरस्कार करके उनसे अधिक फल जो ब्रह्मानन्द उसकूं अनुभव करता हुआ अपने आपकूं कृतकृत्य जान्ता है और जिन्होंने जन्म जन्ममें प्रयत्न करके दूर किये हैं पाप फिर पिछले

जन्म में सिद्ध होकर वे उस गतिकूं अर्थात् ब्रह्मानन्दकूं प्राप्त होवें तो इसमें क्या कहना है ❀ अब और प्रकारके विषयों में दोषदृष्टि पूर्वक जीवन्मुक्ति के साधन सुनो संसारी लोक दो पदार्थोंकूं विशेष कहते हैं धन १ स्त्री २ प्रसिद्ध है कि चोरी, हिंसा, झूठ, दम्भ, काम, क्रोध, गर्व, मद, भेद, वैर, अविश्वास, स्पर्द्धा असूया, निन्दा, छलादि अनेक अनर्थ करके धन सिद्ध होता है और उसके कमानेमें परदेशमें रहना नीचोंकी टहल करनी पराधीन रहनादि और रक्षा करनेमें चोर राजादि का भय और व्यय करने में उसके कम होनेका दुःख और नाशहोने में जो दुःख उसका लिखना क्या चाहिये सब जानते हैं तात्पर्य जिसके आदि मध्य अन्तमें क्लेशही क्लेश है ऐसे दुःखों के कारण धनकूं धिक्कार है और जो प्राकृत जीव धनसे स्त्री मदिरा मांस द्यूत राग द्वेष अभिमान अहंकारादि ऐसे ऐसे यहां अनर्थ कर कर नरकका सामान करते हैं वो व्यवस्था कहांतक लिखें तात्पर्य जितने पाप हैं सब धनसे होते हैं यो धन पापी विद्वान् विचारवान् से भी अनर्थ करादेता है इस बातकी सिद्धिमें श्रुति स्मृति इतिहास युक्ति आदि बहुत प्रमाण हैं इसके त्यागका अधिक माहात्म्य शास्त्रमें लिखा है संसार समुद्र में कान्ता कांचन दो आवर्त हैं तीनों भवन इनमें भ्रम रहे हैं जो इन दोनोंसे विरक्त है वो मनुष्यादि नहीं परमेश्वर है स्त्रीकी स्तुति

सुनो चांडालके घरकी बराबर स्त्री हैं चांडालके घरमें मल मूत्र मांसादि पड़े रहते हैं द्वारेमें चिह्नके लिये अस्थि लगे रहते हैं अस्थिके खंभ चर्मकी रज्जुसे वँधे रहते हैं मकानके ऊपर चर्म पड़े रहते हैं जो उसके मकान की यो व्यवस्था है तो विचारो कि उस मकान की जो मोरी जहां कूं उस मकान का मल जाता है उसकी क्या उपमा देनी चाहिये विचारो स्त्री में ये सब वस्तु हैं वा नहीं स्त्रीका शरीर मकान वसू भीतर उसके मलमूत्रादिका होना प्रसिद्ध है मुख द्वारेवत् दांत अस्थिवत् पैर हस्तादि में अस्थि खम्भवत् नाड़ियोंसे वँधे हुये हैं शरीरके ऊपर चर्म है वा कुछ और है मोरीवत् उस शरीर में मलमूत्र त्याग करने के रस्ते हैं देखो उनकूं ऊपर से देख २ योजीव विना विचारके कैसा आनन्द होता है वृथा नरकवत् मोरी में डूबता है विचारो इससे सिवाय और क्या नरक होगा जो यो कहो कि हमकूं तो ये दोष नहीं फुरते वेशक हम भी जान्ते हैं कि ऐसे जीव जिनकूं विष्ठा मुरदे के मांसमें दोष नहीं फुरते उनके लिये अनेक प्रयत्न करते हैं प्राप्ति के समय अपने कूं कृतकृत्य मानते हैं हमारी दृष्टिमें वेभी तो जीवहैं कुछ यो न समझना ऐसे शूकर कूकरही होते हैं मनुष्य भी वहुत ऐसे होते हैं अव विचारो मनुष्य शरीर में और पशु में क्या भेद हुआ हजारों जगह इन वातों का प्रसंग है इस प्रसंग कूं वहुत क्या लिखें वुद्धिमान् जीवन्मु-

क्तिकी इच्छावाला इसी प्रकार सब पदार्थों में दोषदृष्टि कर कर उनका संग न करें और वोही चांडाल के घरका दृष्टान्त अपने शरीर में घटावे अर्थात् चाण्डाल भी उस घरमें यो अध्यास नहीं करता मैं घरहूं यो अध्यास है कि मेरा घरहै ऐसे अध्यास करने से तो वो चाण्डाल है और जो देह कूं ऐसा कहते हैं कि हम देह हैं अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री आदि वर्ण ब्रह्मचारी आदि आश्रमी पण्डित धनवाले हैं विचारो यो देह चाण्डाल के घर की बरावर है वा नहीं जब देह कूं यो कहा मैं देहहूं फिर वो कौन हुआ तात्पर्य ऐसे विचार देहमें से अध्यासका त्याग करे भ्रमसे और पदार्थमें प्रतीत होना इसकूं अध्यास कहते हैं वासना दो प्रकार की है शुद्ध १ मिलनी २ मुक्ति के लिये शास्त्र विहित अनुष्ठान करने की और श्रवणादि की वासना शुद्धा १ भोगों की वासना और संसारमें प्रसिद्ध होनेकी वासना मिलना २ शुद्धवासना मुक्ति की हेतुहै मलिन वासना जन्मकी हेतु है देहयात्राके लिये भिक्षादि का जो प्रयत्न करना यो ज्ञानी का वासना वंधका हेतु नहीं श्रीभगवान् कहते हैं जिसमें शरीरका निर्वाह होवे वो कर्म करताहुआ पापकूं नहीं प्राप्तहोता ज्ञानीने शरीरयात्रासे सिवाय और वासना का त्याग करना तीन बासना बहुत दुःख करके त्यागी जाती हैं देह वासना १ लोकवासना २ शास्त्रवासना ३ शरारकूं बहुत उपटने चंदनादि लगा

लगाकर चिकना चांदना रखना और जो इच्छा रखनी कि यो शरीर सदा आरोग्य रहे यो देह वासना १ यो इच्छा रखनी कि, सब लोग मुझकूं भला कहें यो लोक वासना २ शास्त्र वासना दो प्रकार की हैं एक तो बहुत पढ़ने सुनने की इच्छा रखनी अर्थात् जाने इस शास्त्र में क्या क्याहै दूसरी जो कर्म जपादि करना शास्त्र विहित करना यों इच्छा रखनी यो शास्त्र वासना ३ इन करके युक्त जो पुरुष उसकूं ज्ञानी भी भले प्रकार नहीं होता तात्पर्य तीनों वासना किसीकी पूर्ण हुई न होंगी युक्तिसे विचार देखो वा गुरु शास्त्र से निश्चय करलो और ये जो दो प्रकार हैं एकतो मनोनाश, नाश वासना क्षय १ ओर दूसरा सदा वेदान्त का श्रवणादि करना२ इनका अविरोध सुनो जिसकूं संशय विपर्यय करके रहित भलेप्रकार ज्ञान होगया है उसकूं तो मनोनाश वासना क्षय मुख्य है श्रवणादि गौण हैं और जिसकूं भले प्रकार ज्ञान नहीं हुआ संशय विपर्यय हैं उसकूं श्रवणादि मुख्य है मनोनाश वासना क्षय गौड़ है मनोनाश वासना क्षय के साधन सुनोवा शिष्टमें लिखा है जो जागता हुआ सुषुप्तिवत् रहे और जिसका जागना निर्वासन हो सो जीवन्मुक्तिहै श्रीभगवान् कहते हैं ज्ञानी सदा संतुष्टरहे मनादि कूं वश रक्खे मौनरहै मौनिके तात्पर्य कूं कोई नहीं पासक्ता बहुत लिखनेसे क्या प्रयोजन है मौनमें बहुत सुख और लाभ हैं और मैं असंग हूं योदृढ विश्वास रक्खे आत्मा में अर्पित

करी है मन बुद्धि जिसने जिससे लोग उद्वेग न करें जो लोगोंसे उद्वेग न करे सोभक्त मुझकूं प्यारा है भक्त स्थित प्रज्ञ गुणातीत शब्द करके बहुत प्रकार श्रीभगवान् ने जीवन्मुक्त के लक्षण कहे हैं निस्पृही कोई नहीं आरम्भ जिसके किसीकूँ नमस्कार न करनी न लेनी न किसी की निन्दा स्तुति करनी समर्थ हुआ मिथ्या जानकर कर्मों का त्याग करदेना सर्पवत् बहुत पुरुषों से डरता रहे नरक वत् सन्मानसे डरता रहे मुरदेवत् स्त्रियों से डरता रहे किसी स्त्रीसे बात न करै पहली देखी हुई कूं स्मरण न करे स्त्रियों की कथा न कहै न सुनै काष्ठकी और लिखीहुई कूं भी न देखे उसकूं देवता ब्राह्मण कहते हैं तात्पर्य जीवन्मुक्त कहते हैं ऐसे ऐसे और भी वाक्य हैं हे युधिष्ठिर मुक्तिमें जाति कारण नहीं शम दमादि गुण कारण हैं ये शम दमादि गुण जो चाण्डालके भी होंगेतो देवता उसकूं ब्राह्मण कहते हैं जैसे स्वप्नमें प्रपंचप्रतीतहोताहै ऐसे जाग्रत प्रपञ्च का निश्चय करे जैसे बाजीगरके पदार्थों में वासना नहीं होती ऐसे इन पदार्थों कूं जानकर वासना न करै अपने कूं असंग जानने से और संसार की मिथ्याभाव निश्चय करने से शरीर कूं क्षणभंगुर जानने से वासना का उदय नहीं होता जिसका निर्वासन मन है उसकूं कर्म और कर्मके फल स्वर्गादि समाधान करना मनका जप करना आदि कुछ अपेक्षा नहीं आत्मानन्दसे

पृथक् सब इन्द्रजालवत् हैं जब ऐसा निश्चय हुआ फिर मन की वासना कहां जावे जन्म जरा व्याधि मृत्युमें दुःखही दुःख है फिर भी कुछ एक बार नहीं बारम्बार दुःख उनका अनुसंधान करते हुये वासना का उदय नहीं होता कुसंगके त्यागनेसे भी वासना का उदय नहीं होता ज्ञानीने किसीका संग न करना योंहीं उनका मुक्तपदहै क्योंकि संगसे अशेष दोष होतेहैं योगरूढ़ भी कुसंग करनेसे प्रतीत होजाताहै थोड़ी सिद्धिवाला जो कुसंग से पतित होजावे तो इसमें क्या कहना है श्रीमद्भागवत में लिखाहै स्त्रीके संगी जो पुरुष हैं मुक्तिकी इच्छावाला उनका संग त्याग दे इन्द्रियों कूं शब्दादि विषयों में प्रवर्त्त न करे विचरे तो अकेला विचरे यादि एकान्त में बैठकर चित्तकूं अनन्त भगवान् में जोड़ै जो सर्वथा संग न त्यागा जावे तो साधुवों का संगकरे समस्त वासना का त्याग कर देना चाहिये जो सब न त्यागी जावें तो मुक्तिकी वासना रक्खे स्त्रियोंका और स्त्री संगी पुरुषों का संग विद्वान् दूर सेही त्याग दे एकान्त में बैठकर आलस्य कूं त्यागकरके स्वरूप का चिन्तवनकर स्त्रीका संग साक्षात् ऐसा अनर्थ नहीं करता जैसे स्त्रीके संगी का संग अनर्थ करता है दृष्टान्त यो है ज्येष्ठके महीनेमें दिनभर धूपमें चलाजावो वा खड़ारहो परन्तु मरतानहीं उस धूप करके तपाहुआ जो रत उसमें बैठे रहनेसे निश्चय होता है कि मरजावे इसी

प्रकार सब पदार्थों की सन्निधि ऐसा अनर्थ नहीं करती जैसा भोगी का संग अनर्थ करता है महज्जनों का संग मुक्तिका हेतुहै कामियों का संग नरक का हेतु है ऐसे ऐसे साधन करके युक्त जीव अपरोक्ष ज्ञान द्वारा निश्चय मुक्त हो जाता है ॥

दश आदमी नदी उतरे, पार जाकर संख्या करी कि कोई हममें डूबा तो नहीं जिसने संख्या करी उसने आप कूं न गिना फिर यो निश्चय करलिया कि हम दश थे एक डूबगया व आपको भूलकर रोनेलगा उस समय कोई और पुरुष वहां आगया उसने बूझा कि तुम क्यों रोते हो कहा कि हम दश पारसे उतरे थे अब नव हैं एक नदीमें डूबगया उसने जो अपने मनमें संख्या करी तो दश प्रत्यक्ष हैं उसने कहा तुम शोक मतकरो दशवां है यो वाक्य सुनकर उसको निश्चयहुआ कि दशवां डूबा नहीं कहीं इसने देखाहै अपने आपकूं दशवां निश्चयनहीं किया इसकूं तो परोक्ष ज्ञान कहते हैं फिर उसने कहा कि तू मेरे सामने संख्या कर तब फिर उसने वैसेही आपसे पृथक् नवकूं गिना आपकूं न गिना उसने कहा दशवां तू है तब उसने जाना कि निःसंदेह दशवां मैं हूं इसकूं अपरोक्ष ज्ञान कहते हैं ऐसेही जिसने गुरु शास्त्रसे सुनकर यो निश्चय कर रक्खाहै कि कोई ब्रह्महै आपकूं निश्चय नहीं किया कि मैं ब्रह्महूं इसकूं तो परोक्षज्ञान कहते हैं यो

परोक्षज्ञान गुरू शास्त्र पूर्वक जिसकूं है सो ज्ञान बुद्धि पूर्व्वक उसके किये हुये समस्त पापोंकूं अग्निवत् भस्म करदेताहै जब यो निश्चयहुआ कि मैंही ब्रह्महूं इसकूं अपरोक्षज्ञान कहते हैं यो अपरोक्ष ज्ञान गुरू शास्त्र पूर्वक जिसकूं है सो ज्ञानमूलाज्ञान सहित समस्त संसारकूं दूर कर देताहैं अर्थात् उसका जन्म नहीं होता वो निरतिशयानन्द कूं प्राप्त होताहै इस प्रकार परमात्मा का स्वरूप चिन्तवन करनेसे तृप्तितो नहीं होती परन्तु ग्रन्थके विस्तारके भयसे अलम् परिपूर्णम् परमेश्वरकूं वारम्वार नमस्कार है कैसे वे परमेश्वर हैं जिन्होंने गोपियों के वस्त्रहरेहैं ऐसे जो श्रीकृष्णचन्द्र महाराज उनमें प्रथम दासोऽहम् यो मेरी बुद्धिथी सो महाराज ने अपने स्वभावके अनुसार मेरा भी दाकार हरलिया अब सोऽहम् यो शेषबुद्धि होगई वारम्वार महाराजकूं इस हेतु से नमस्कार करताहूं कि मुझकूं ऐसा निश्चय होताहै व्यतीत जन्मों में महाराज कूं कभी नमस्कार नहीं किया क्योंकि जो ये जन्म हुआ और इस जन्म में जो नमस्कार किया तो आगेकूं जन्म नहीं होवेगा स्थूलादि शरीरोंके अभाव होने से नमस्कार कौन करेगा इसीलिये पिछले अपराधके क्षमाके लिये और आगेकूं नमस्कार न करना इस कृतघ्नता महादोष दूर होने के लिये इसी जन्ममें वारम्वार नमस्कार करताहूं श्रीकृष्णचं

न्द्राय नमोनमः ३ जिसकी देवता में परमभक्ति और जैसी देवता में वैसेही गुरू में है उस आत्माकूं कहे हुये ये अर्थ प्रकाश होंगे अन्यकूं नहीं होंगे यो श्रुतिका अर्थहै श्रीमत्परम हंस परिव्राज स्वामी मलूक गिरि जी महाराज उनके चरण कमलों का पूजनेवाला अनुचर शिष्य आनन्दगिरि नामने यह ग्रन्थ आनन्दामृत वर्षिणी मुन्शी बंशीधर जी जिनके किञ्चित् गुण प्रथम अध्याय में लिखे हैं उनकूं सुखपूर्वक ब्रह्मतत्त्व जानने के लिये उनका श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रार्थना से अति सुगम अति पवित्र अति गुप्त सब विद्या धर्मोंमें श्रेष्ठ जो इसमें ब्रह्मतत्त्व सो सुख पूर्वक जानाजावे प्रत्यक्ष फलहै जिसमें सो आज द्वितीय ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष द्वितीया रविवार सम्वत् उन्नीस सौ पन्द्रह १९१५ में विनिर्मित करके समाप्त किया पढ़ने सुनने वालोंकूं शान्तिहो शुभहो हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् हरिः ॐ तत्सत् श्रीकृष्णचन्द्राय नमोनमः ।

इति श्रीआनन्दाऽमृतवर्षिणीदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

समाप्तम् ॥

अपारसंसारसमुद्रमध्येनिमज्जंतोमेशरणंकिमस्ति ॥ गु-
रोकृपालोकृपयावदैतद्विश्वेशपादाम्बुजदीर्घनौका १ बद्धो-
हिकोयोविषयानुरागः कोवाविमुक्तोविषयेविरक्तः ॥ को
वास्तिघोरोनरकःस्वदेहस्तृष्णाक्षयःस्वर्गपदंकिमस्ति २
संसारहृत्कस्तुनिजात्मबोधः कोमोक्षहेतुः प्रथितः सएव ॥
द्वारंकिमेकंनरकस्यनारीकास्वर्गदाप्राणभृतामहिंसा ३ शेते
सुखंकस्तुसमाधिनिष्ठो जागर्त्तिकोवासदसद्विवेकी ॥
केशत्रवःसन्तिनिजेंद्रियाणिकान्येवमित्राणिजितानितानि ४
कोवादरिद्रोहिविशालतृष्णःश्रीमांश्चकोयस्यसमस्ततोषः॥
जीवन्मृतः कस्तुनिरुद्यमोयः कावास्मृतास्यात्सुखदादुरा
शा५ पाशोहिकोयोममताभिधानंसंमोहयत्येवसुरेवकास्त्री॥
कोवामहांधोमदनातुरोयोमृत्युश्चकोवापयशः स्वकीयम् ६
कोवागुरुर्योहिहितोपदेष्टाशिष्यस्तुकोयोगुरुभक्तएव ॥ को
दीर्घरोगोभवएवसाधोकिमौषधंतस्यविचारएव ७ किंभूष
णाद्भूषणमस्तिशीलंतीर्थंपरंकिंस्वमनोविशुद्धम् ॥ किमत्रहे
यंकनकञ्चकान्तासेव्यंसदाकिंगुरुवेदवाक्यम् ८ केहेतवो
ब्रह्मगतेस्तुसन्तिसत्सङ्गतिर्दानविचारतोषाः ॥ केसन्ति
सन्तोऽखिलवीतरागाअपास्तमोहाःशिवतत्त्वनिष्ठाः ९ को
वाज्वरःप्राणभृतांहिचिन्तामूर्खोऽस्तिकोयस्तुविवेकहीनः ॥
कार्याप्रियाकाशिवविष्णुभक्तिः किंजीवनंदोषविवर्ज्जितंय
त् १० विद्याहिकाब्रह्मगतिप्रदायाबोधोऽस्तिकोयस्तुवि-
मुक्तिहेतुः ॥ कोलाभआत्मावगमोहियोवैजितंजगत्केनम

नोहियेन ११ शूरान्महाशूरतरोऽस्तिकोवामनोजवाणैर्व्य
थितोनयस्तु ॥ प्राज्ञोऽतिधीरश्चसमोऽस्तिकोवाप्राप्तोन
मोहंललनाकटाक्षैः १२ विषाद्विषंकिंविषयाःसमस्तादुः
खीसदाकोविषयानुरागी ॥ धन्योऽस्तिकोयस्तुपरोपका
रीकःपूजनीयोननुतत्त्वनिष्ठः १३ सर्वास्ववस्थास्वपिकिं
नकार्यंकिंवाविधेयंविदुषाप्रयत्नात् ॥ स्नेहंचपापंपठ-
नंचधर्मःसंसारमूलंहिकिमस्त्यविद्या १४ विज्ञान्महाविज्ञ-
तमोऽस्तिकोवानार्यापिशाच्यानचवंचितोयः ॥ काशृं
खलाप्राणभृताश्चनारीदिव्यंव्रतंकिञ्चनिरस्तदैन्यम् १५ ज्ञा
तुंनशक्यंहिकिमास्तिशैवैर्योषिन्मनोयच्चरितंतदीयम् ॥ का
दुस्त्यजासर्वजनैर्दुराशाविद्याविहीनःपशुरास्तिकोवा १६
वासोनसंगः सहकैर्विधेयोमूर्खैश्चपापैश्चखलैश्चनीचैः ॥
मुमुक्षुणाकिंत्वरितंविधेयंसत्संगतिर्निर्ममतेषुभक्तिः १७
लघुत्वमूलंचकिमर्थितैवगुरुत्वबीजंवदयाचनंकिम् ॥ जा-
तोस्तिकोयस्यपुनर्नजन्मकोवामृतोयस्यपुनर्नमृत्युः १८
मूकस्तुकोवाबधिरश्चकोवा युक्तंनवक्तुंसमयेसमर्थः ॥ तथ्यं
सुपथ्यंनशृणोतिवाक्यंविश्वासपात्रंनकिमस्तिनारी १९तत्त्वं
किमेकंशिवमद्वितीयंकिमुत्तमंसच्चरितंवदन्ति ॥ किंकर्मकृ-
त्वानहिशोचनीयःकामारिकंसारिसमर्चनाख्यम् २०शत्रोर्म-
हाशत्रुतमोऽस्तिकोवाकामःसकोपानृतलोभतृष्णः ॥ नपू-
र्यतेकोविषयैःसएवकिंदुःखमूलंममताभिधानम् २१ किंम-
ण्डनंसाक्षरतामुखस्यसत्यंचकिंभूतहितंतदेव ॥ सत्यासुखं

किंस्त्रियमेवसम्यग्देयंपरंकिंत्वभयंसदैव २२ कस्यास्ति
नाशेमनसोहिमोक्षःक्वसर्वथानास्तिभयंविमुक्तौ ॥ शल्यंपरं
किंनिजमूर्खतैवकेकेह्युपास्यागुरवश्चवृद्धाः २३ उपस्थिते
प्राणहरेकृतांतेकिमाशुकार्यंसुधियाप्रयत्नात् ॥ वाक्काय-
चित्तैःसुखदंयमघ्नंमुरारिपादाम्बुजमेवचिंत्यम् २४ केदस्यवः
सन्तिकुवासनाख्याःकःशोभतेयःसदसिप्रविद्यः ॥ मातेवका
यासुखदासुविद्याकिमेधतेदानवशात्सुविद्या २५ कुतोहि
भीतिःसततंविधेयालोकापवादाद्भवकाननाच्च ॥ कोवास्ति
वंधुःपितरौचकौवाविपत्सहायौपरिपालकौयौ २६ बुद्ध्वा-
नवोद्धुंपरिशिष्यतेकिंशिवंप्रशांतंसुखबोधरूपम् ॥ ज्ञातेतुक-
स्मिन्विदितंजगत्स्यात्सर्वात्मकेब्रह्मणिपूर्णरूपे २७ किंदु-
र्लभंसद्गुरुरस्तिलोकेसत्संगतिर्ब्रह्मविचारणंच ॥ त्यागोहि
सर्वस्यशिवात्मबोधःकिंदुर्जयंसर्वजनैर्मनोजः २८ पशोः
पशुःकोनकरोतिधर्मंप्राधीतशास्त्रोपिनचात्मबोधः ॥ किंत-
द्विषंभातिसुधोपमंस्त्रीकेशत्रवोमित्रवदात्मजाद्याः २९ वि-
द्युच्चलंकिंधनयौवनायुर्दानंपरंकिंचसुपात्रदत्तम् ॥ कण्ठंगतै-
रप्यसुभिर्नकार्य्यंकिंकिंविधेयंमलिनंशिवार्चा ३० किंकर्म
यत्प्रीतिकरंमुरारेःक्वास्थानकार्य्यासततंभवाब्धौ ॥ अहर्नि-
शंकिंपरिचिंतनीयंसंसारमिथ्यात्वशिवात्मतत्त्वम् ३१ कंठं-
गतावाश्रवणंगतावाप्रश्नोत्तराख्यामणिरत्नमाला ॥ तनो
तुमोदंविदुषांसुरम्यारमेशगौरीशकथेवसद्यः ॥ ३२ ॥

इत्यानन्दामृतवर्षिणी समाप्ता ॥

पंचदशी।

ऐहिकामुष्मिकव्रातसिद्धैर्मुक्तैश्चसिद्धये ॥ बहुकृत्यंपुरा-
ण्याभूत्तत्सर्वमधुनाकृतम् ४० तदेतत्कृतकृत्यात्वंप्रतियोग
पुरस्सरम्॥अनुसंदधदेवायमेवंतृप्यतिनित्यशः ४१दुःखिनो
ऽज्ञास्संसरन्तुकामंपुत्राद्यपेक्षया ॥ परमानन्दपूर्णोऽहंसंसरा-
मिकि मिच्छया४२अनुतिष्ठन्तिकर्माणिपरलोकयियासवः॥
सर्वलोकात्मकःकस्मादनुतिष्ठामिकिंकथम् ४३ व्याचय-
न्त्वथशास्त्राणिवेदानध्यापयन्तुवा ॥ येत्राधिकारिणोमेतुना
धिकारोक्रियत्वतः ४४ निद्राभिक्षेस्नानशौचेनेच्छामिन-
करोमिच ॥ द्रष्टारश्चेत्कल्पयंतिकिंमेस्यादप्रकल्पनात्
४५ गुंजापुंजादिदह्येतनान्यारोपितवह्निना ॥ नान्यारो
पितसंसारधर्म्मानेवमहंभजे ४६ शृण्वंत्वज्ञाततत्वास्ते
जानन्कस्माच्छृणोम्यहम्॥मन्यन्तांसंशयापन्नानमन्येऽहम-
संशयः ४७ विपर्यस्तोनिदिध्यासेत्किंध्यानमविपर्यये॥दे-
हात्मत्वविपर्यासंनकदाचिद्भजाम्यहम् ४८अहंमनुष्यइत्या-
दिव्यवहारोविनाप्यमुम्॥विपर्यासंचिराभ्यस्तवासनातोऽव-
कल्पते४९प्रारब्धकर्म्मणिक्षीणेव्यवहारोनिवर्त्तते॥कर्म्माक्ष-
येत्वसौनैवशाम्येद्ध्यानसहस्रतः५०विरलत्वंव्यवहृतेरिष्टंचे-
द्ध्यानमस्तुते॥अबाधिकाव्यवहृतिंपश्यन्ध्यायाम्यहंकुतः
५१ विक्षेपोनास्तियस्मान्मेनसमाधिस्ततोमम॥विक्षेपोवास
माधिर्वामनसःस्याद्विकारिणः५२ नित्यात्मभवरूपस्यकोमे

वानुभवःपृथक्॥कृतंकृत्यंप्रापणीयंप्राप्तमित्येवनिश्चयः ५३
व्यवहारोलौकिकोवाशास्त्रीयोवान्यथापिवा ॥ ममकर्तुर
लेपस्ययथारब्धंप्रवर्त्तताम् ५४ अथवाकृतकृत्योऽपिलोका
नुग्रहकाम्यया॥ शास्त्रीयेणैवमार्गेणवर्त्तेऽहंकाममक्षितः ५५
देवार्चनस्नानशौचभिक्षादौवर्त्ततांवपुः ॥ तारंजपतुवाक्त-
द्वत्पठित्वाम्नायमस्तकम्५६विष्णुंध्यायतुधीर्यद्वाब्रह्मानन्दे
विलीयतां॥साक्ष्यहंकिंचिदप्यत्रनकुर्वेनापिकारये५७कृतकृ
त्यतयातृप्तःप्राप्तप्राप्यतयापुनः ॥ तृप्यन्नेवंस्वमनसामन्यते
सौनिरन्तरम् ५८ धन्योऽहंधन्योऽहंनित्यंस्वात्मानमंजसावे
द्मि॥धन्योऽहंधन्योऽहंब्रह्मानन्दोविभातिमेस्पष्टं५७ धन्योऽहं
धन्योहंदुःखंसांसारिकंनवीक्षेऽद्य॥धन्योऽहंधन्योऽहंस्वस्या
ज्ञानंपलायितंक्वापि ६० धन्योऽहंधन्योऽहंकर्त्तव्यंमेनविद्य
तेकिंचित्॥धन्योऽहंधन्योऽहंप्राप्तव्यंसर्वमद्यसम्पन्नम् ६१ ध
न्योऽहंधन्योऽहंतृप्तेर्मेकोपमाभवेल्लोके ॥ धन्योऽहंधन्योऽहंध
न्योधन्यःपुनःपुनर्धन्यः६२ अहोपुण्यमहोपुण्यंफलितंफलि
तंदृढम् ॥अस्यपुण्यस्यसम्पत्तेरहोवयमहोवयम्६३अहोशा
स्त्रमहोशास्त्रमहोगुरुरहोगुरुः ॥ अहोज्ञानमहोज्ञानमहोसुख
महोसुखम् ६४ ॥

इति ॥

इति

आनन्दामृतवर्षिणी

समाप्ता ।

श्रीमद्भागवत संस्कृत तथा भाषा-टीका सहित।

श्रीवेदव्यासप्रणीत श्रीमद्भागवत सबसे कठिनहै और इसकाप्रचार भरतखण्डमें सबसे अधिक है यह ग्रंथ क्लिष्टताके कारण सर्व साधारण लोगोंको टीका होनेपर भी अच्छी रीतिसे समझना कठिन था कोई २ स्थलोंमें बड़े २ पण्डितोंकी भी बुद्धि चक्करमें पड़जाती थी, इसलिये विना संस्कृत पढ़े सर्व साधारण पण्डित व स्वल्प विद्याजाननेवाले भगवद्भक्तोंके लाभार्थ संस्कृत मूल व अतिप्रिय ब्रजभाषा टीकासहित जोकि हिन्दी भाषाओंमें शिरोमणि और माननीयहै उसी भाषामें टीका बनवाकर प्रथमावृत्ती छपायाथा वह बहुतही जल्दी हाथोंहाथ विकगई, फिर द्वितीयावृत्तिभी विकगई अब इस्की तृतीयावृत्ति द्वितीयावृत्तिकी अपेक्षा अच्छी तरह शुद्ध करवाके मोटे अक्षरमें छपायाहै और भक्ति ज्ञानमार्गी ५०० अतीव मनोहर दृष्टांत दिये हैं. कागज विलायती बढ़िया लगायाहै, माहात्म्य षष्ठाध्यायी भाषाटीका सहित इस्के साथहीहै, प्रथमावृत्तिमें मूल्य १५ रुपया या इस आवृत्तिमें केवल १२ बाराही रुपया रक्खा है.

पद्मपुराण समग्र सातो खंड ५५००० ग्रंथ छपातयार है मूल्य डाकव्यय सहित केवल १८ रु० मात्र अर्थात् १८ रु० भेजनेसे घर बैठे ग्रंथमिलजावेगा-

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण।

श्रीवाल्मीकीय रामायण २४००० ग्रंथका सरलसुबोध ब्रजभाषाटीका बनवाकर छापके तैयार किया है जिसके बीचमें मूल और नीचे ऊपर भाषाटीका है. और एक वाल्मीकीय रामायणका भाषावार्तिक छपा है. जिसमें